# नूपुर - 2019

स्वामी नित्यात्मानन्द जी महाराज के 126वें जन्मोत्सव पर स्मारिका-रूप में कतिपय 'नूपुर'



#### श्री रामकृष्ण श्री म प्रकाशन ट्रस्ट (श्री म ट्रस्ट)

कार्यालय : 579, सैक्टर 18-बी, चण्डीगढ़ 160 018

फोन 0172-2724460 मो० 08427999572

मन्दिर : श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत पीठ (श्री पीठ)

सैक्टर 19-डी, चण्डीगढ़ 160019

website : http://www.kathamrita.org

email : srimatrust@yahoo.com

#### © श्री म ट्रस्ट गंगा दशहरा, 12 जून, 2019

डॉ० (श्रीमती) निर्मल मित्तल सम्पादन

डॉ० नौबतराम भारद्वाज सन्दीप नांगिया सहायता

प्रकाशन

श्री रामकृष्ण श्री म प्रकाशन ट्रस्ट (श्री म ट्रस्ट) 579. सैक्टर 18-बी. चण्डीगढ़ 160 018 फोन - 0172-2724460, मो० 08427999572 : प्रिंट लैण्ड, कश्मीरी गेट,

मुद्रण

दिल्ली - 110006

### समर्पण

कथामृतकार श्री 'म' की सेवक-सन्तान स्वामी नित्यात्मानन्द जी महाराज को जो श्री म दर्शन-ग्रन्थमाला के माध्यम से श्रीरामकृष्ण-कथा को, कथामृत में कही-अनकही ठाकुर-वाणी को हम तक लाए।

### 'नूपुर' नाम क्यों?

ठाकुर दक्षिणेश्वर में नरेन्द्र, भवनाथ आदि भक्तों के संग में हैं। ठाकुर गाना गा रहे हैं— बोल रे श्रीदुर्गा नाम। (ओ रे आमार आमार आमार मन रे)।

. . .

यदि बोलो छाड़ो-छाड़ो मा, आमि ना छाडि़बो। बाजन नूपुर होये मा तोर चरणे बाजिबो॥\*1

दीदी जी (श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता) कहा करतीं कि ठाकुर-वाणी का अक्षर-अक्षर है 'नूपुर'। इन 'नूपुरों' की झंकार से सब पाठक ठाकुर का शुद्ध प्यार पाएँ, इस अभिलाषा से ही उन्होंने अपने गुरु महाराज के 101वें जन्म-दिन पर सन् 1994 में स्मारिका-रूप में वार्षिक पत्रिका का प्रारम्भ 'नूपुर' नाम से किया था। उनका विश्वास था कि ठाकुर-वाणी के पठन-श्रवण-मनन और पालन से व्यक्ति स्वयं बन जाता है माँ के चरणों का 'नूपुर'।

<sup>&</sup>lt;sup>1</sup> ओ मेरे मन, तू दुर्गा-दुर्गा नाम बोल। ... यदि कहो छोड़, छोड़, किन्तु मैं नहीं छोड़ूँगा। हे माँ, मैं तेरे चरणों का नूपुर बनकर बजूँगा।]

<sup>—</sup> कथामृत भाग II, सप्तदश खण्ड, द्वितीय परिच्छेद, 19-09-1884

### विषय-सूची

	निवेदन	7-8
1.	अवतारवरिष्ठ श्री रामकृष्ण	11-15
	- स्वामी पीताम्बरानन्द	
2.	पंडित रामेन्द्र सुन्दर भक्तितीर्थ भट्टाचार्य की	17-25
	श्रीरामकृष्ण देव विषयक पवित्र स्मृतियाँ संकलन - स्वामी तन्निष्ठानन्द	
2		27.40
3.	श्री रामकृष्ण और श्री म	27-40
	- दिलीप कुमार सेनगुप्त, अनुवादः श्री सन्दीप नांगिया	
4.	मास्टर महाशय के सदुपदेश	41-55
	- डॉ० नौबतराम भारद्वाज	
5.	Lectures by Swami Dayatmanandaji :  I Swami Vivekananda II Ma Sarda	57-62
6.	ग्रन्थकार स्वामी नित्यात्मानन्द जी की दृष्टि में श्री 'म दर्शन'	65-76
	- डॉ० नौबतराम भारद्वाज	
7.	श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता विषयक स्मृतियाँ	79-83
	- श्रीमती संगीता कपूर	
8.	Extracts from	85-87
	M. The Apostle and the Evangelist Collection : Sh. Nitin Nanda	
9.	Patience and Forgiveness Necessary Collection : Sh. Nitin Nanda	89-91
10.	श्री म ट्रस्ट : परिचय, उद्देश्य और गतिविधियाँ	93-99
	- डॉ० (श्रीमती) निर्मल मित्तल	

•

#### श्री 'म' ट्रस्ट

श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत के प्रणेता श्री महेन्द्रनाथ गुप्त, बाद में मास्टर महाशय वा श्री 'म' (M.) के नाम से विख्यात हुए।

इन्हीं श्री म के अन्तरंग शिष्य थे स्वामी नित्यात्मानन्द जो 'श्री म दर्शन' ग्रन्थमाला के प्रणेता हैं। और वे ही हैं श्रीरामकृष्ण श्री म प्रकाशन ट्रस्ट (श्री म ट्रस्ट) के संस्थापक।

अपने जीवन में ठाकुर-वाणी का पालन व प्रचार-प्रसार करने वाले श्री 'म' के पास दीर्घकाल तक रहकर स्वामी नित्यात्मानन्द जी को विश्वास हो गया था कि जगत् के सकल काम-काज करते हुए भी मन से ईश्वर के साथ रहा जा सकता है और यही है शाश्वत शान्ति तथा परमानन्द का सहज, सरल उपाय। परमानन्द की प्राप्ति ही है मनुष्य-जीवन का एकमात्र उद्देश्य। इसी परमानन्द की प्राप्ति जन-जन को हो, इस उद्देश्य से स्वामी नित्यात्मानन्द जी महाराज ने अपने प्रथम गुरु श्री 'म' की स्मृति में 12 दिसम्बर सन् 1967 को श्री 'म' ट्रस्ट (श्रीरामकृष्ण श्री 'म' प्रकाशन ट्रस्ट) को रोहतक में रजिस्टर करा दिया था जो बाद में चण्डीगढ़ ले आया गया। तब से लेकर आज तक ठाकुर-कृपा से ठाकुर-वाणी के प्रचार-प्रसार का कार्य निरन्तर चल रहा है और आगे बढ़ रहा है।

श्री 'म' ट्रस्ट से जुड़े ठाकुर-भक्तों/सेवकों पर ठाकुर इसी तरह अपना शुद्ध प्यार बनाए रखें, यही उनके श्री चरणों में प्रार्थना है।

— अध्यक्ष, श्री 'म' ट्रस्ट



योगी-चक्ष

#### निवेदन

ठाकुर श्रीरामकृष्ण ने एक बार श्री म (मास्टर महाशय) से कहा थाः

श्री श्री रामकृष्ण — (मणि, 'म', मास्टर महाशय¹ के प्रति) योगी का मन सर्वदा ही ईश्वर में रहता है — सर्वदा ही आत्मस्थ ! चक्षु अर्धनिमीलित — आधे बन्द, आधे खुले । देखते ही पता लग जाता है — जैसे पक्षी अण्डे सेता है । सारे का सारा मन उसी अण्डे की ओर होता है । ऊपर नाम मात्र को देखता है । अच्छा, मुझे ऐसी छवि (चित्र) दिखा सकते हो ?

श्री म — जी, जो आज्ञा ! मैं चेष्टा करूँगा, यदि कहीं से मिल जाए ।

— 'कथामृत' भाग तीन, 24 अगस्त, 1882

बाद में ठाकुर के कहने के अनुसार योगी-चक्षु की यह छवि श्री म ने तैयार करवाई भी थी। पक्षी की एकाग्रता, उसका तन्मय भाव अपने मन पर आरोप करने के लिए वे भक्तों को बीच-बीच में इसे दिखाते थे — पक्षी का सम्पूर्ण मन अण्डे की ओर है। अन्तर्दृष्टि — बाहर से केवल देख रहा है। योगी की दृष्टि इसी प्रकार अर्धनिमीलित, बाहर से आँखें खुली रहने पर भी अन्तर् में मन स्माधिस्थ होता है।

 $<sup>^1</sup>$  श्री श्री रामकृष्ण कथामृत के प्रणेता मास्टर महाशय ने स्वयं को छिपाने के लिए 'मिण', 'एकटि भक्त' आदि छद्म नामों का 'कथामृत' में अपने लिए प्रयोग किया है।

एक भक्त के पूछने पर कि क्या ठाकुर ने इस छवि को देखा था, श्री म उत्तर देते हुए कहते हैं :

श्री म — ना, बोले थे बनवाने के लिए। उनके शरीर-त्याग के पीछे हुई थी यह।

- श्री म दर्शन भाग 4, 21 मार्च, 1924

प्रायः आँखें बन्द करके ही ध्यान किया जाता है। चक्षु खोल कर भी ध्यान होता है। इस विषय में श्री म कह रहे हैं:

चक्षु खोल कर भी ध्यान होता है। देखते हुए कौन ध्यान कर सकते हैं? जिनका पक्षीवत् मन हो गया — अण्डे से रहा है। आँखें अर्ध निमीलित। मन रहता है वहाँ, अण्डों में। वैसे ही जिनका मन सर्वदा ईश्वर में रहता है, वे खुली आँखों से ध्यान कर सकते हैं।

- श्री म दर्शन भाग 4, अध्याय 5: 23 मार्च, 1924,

इस बार के नूपुर में सदा की भान्ति ठाकुर श्रीरामकृष्ण, माँ सारदा, स्वामीजी, श्री म, स्वामी नित्यात्मानन्द, श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता के जीवन व उपदेशों, उनकी कृतियों से युक्त कतिपय सामग्री है। भक्तों के लिए ये सभी बातें हैं ध्यानगम्य।

इनके माध्यम से सभी पाठकों को श्री माँ-ठाकुर का शुद्ध प्यार मिले, इसी शुभेच्छा के साथ प्रस्तुत है इस वर्ष का, 2019 का नूपुर।

- डॉ॰ (श्रीमती) निर्मल मित्तल



अन्दर से श्री पीठ का मन्दिर



श्रीरामकृष्ण परमहंस

• जन्म : 18 फरवरी, सन् 1836 ईसवी।

• स्थान : कामारपुकुर (हुगली जिले का अन्तर्वर्ती ग्राम)

• माता-पिता : श्रीमती चन्द्रमणि देवी और श्री क्षुदिराम चट्टोपाध्याय (चटर्जी)।

• भाई-बहन : दो बड़े भाई, दो बहनें।

शिक्षा : कुछ दिन पाठशाला में गए। प्रारम्भ से ही अर्थकरी विद्या से विकर्षण।
 स्कूल से भागे रहते। लेख सुन्दर। अद्भुत स्मरण-शक्ति।

• विवाह : 22-23 वर्ष की आयु में सन् 1859 में 6-7 वर्षीय सारदा मणि के साथ।

• दक्षिणेश्वर-वास : बड़े भाई रामकुमार की मृत्यु के बाद दक्षिणेश्वर में पुजारी। बाद में पूजा-कर्म से निवृत्त होकर वहीं दक्षिणेश्वर में स्वतन्त्र वास— प्राय: अन्त समय तक।

• महासमाधि : 16 अगस्त, 1886 ईसवी।

### अवतारवरिष्ठ श्री रामकृष्ण

प्रवचन : स्वामी पीताम्बरानन्द

(पूर्व सचिव, रामकृष्ण मिशन आश्रम, चण्डीगढ़)

16-03-2002 दोपहर बारह ठाकुर रामकृष्ण का 166वाँ जन्मदिवस स्थान : रामकृष्ण मिशन आश्रम, चण्डीगढ़

स्वामी विवेकानन्द ने श्रीरामकृष्ण को कहा है— 'अवतारवरिष्ठ'। क्यों ? क्या कारण है ?

पहली बात तो यह है कि अवतार किसी भी प्रकार से अलग-अलग नहीं होते ।

भगवान कृष्ण के बचपन के एक प्रसंग का कविजन जो वर्णन करते हैं:

"माँ यशोदा की गोदी में भगवान मचल रहे हैं। यशोदा उनको कहानी सुना करके शान्त करने की कोशिश में हैं। और कहानी सुनते-सुनते मानो वे निद्रा के अभिभूत होते जा रहे हैं। पर बीच-बीच में 'हूँ' तो कहते जा रहे हैं। माता जानती हैं कि जब ये 'हूँ' कहना बन्द कर देंगे तो 'सो गए हैं' जानकर कहानी भी बन्द कर देंगी वे। कहानी होते-होते कहानी में राजा दशरथ आए, कौशल्या जी आईं, राम आए, सीता जी के साथ पाणिग्रहण हुआ, 'हूँ' चल रहा है। फिर वनवास हुआ और इनकी हुँकार धीरे-धीरे कम होते जा रही है पर जैसे ही कहानी में सुना कि रावण सीता जी का हरण करके चले गए हैं, वे तड़ाक से उठ बैठे और बोले—'ऐ लक्ष्मण! मेरा धनुष बाण ले आ। देखता हूँ कैसे रावण जाता है ? '... तो कहानी को सुनते-सुनते कृष्ण को अपने राम रूप का स्मरण हो गया पूरी तरह से।

भगवान रामकृष्ण के जीवन में मुहुर्मुहुः ऐसी घटनाएँ देखने को मिलती हैं। सो अवतारों में कोई कम्पीटीशन तो हम लगा नहीं सकते। ज़रा भी भेद नहीं है। श्री रामकृष्ण जी का हनुमान जी द्वारा कहा हुआ एक श्लोक बड़ा प्यारा है—'श्रीनाथे जानकीनाथे अभेद परमात्मिन'। सो यहाँ पर तो कोई भेद नहीं है।

पर भगवान का अवतार होता क्यों है ? रावण की और कंस की बातें—ये एक बहाना-सा हो सकता है। अवतार हमारे लिए आते हैं। हम निर्गुण परब्रह्म को प्यार कर सकें, इसलिए वे आते हैं। मनुष्य अपने जीवन में क्या-क्या हासिल कर सकता है, इसको दिखाने के लिए आते हैं। अंग्रेज़ी में कहावत है—God becomes man so that man may become God.

अब हमें ज़रा अपनी पहचान करनी आवश्यक है। भगवान हमको उठाते चले जाते हैं और हम उस उठने के बाद अपनी फिसलने की प्रवृत्ति से फिर फिसलते रहते हैं। फिसलने में एक मज़ा है कि भगवान फिर से आते हैं। अब यह फिसलन कहाँ तक पहुँची है, इसको देखिए।

मनुष्य का स्वभाव देखें तो भगवान राम के समय के सारे ही लोग सरल दिखाई देंगे। दुष्ट भी कहते हैं—हाँ, मैं दुष्ट हूँ। वहाँ पर सज्जन को सज्जन के रूप में और दुष्ट को दुष्ट के रूप में देखना बड़ा आसान है।

भगवान श्री कृष्ण के समय की दुनिया देखिए। आदमी का मन बड़ा ही complicated, कृत्रिम हो चुका है वहाँ पर। दुर्योधन कहता है कि अच्छा क्या है, बुरा क्या है, यह मैं समझ पाता हूँ पर ऐसा कर नहीं पाता। फिर अच्छे को बुरा और बुरे को अच्छा स्थापित करने की होड़ भी चलती रही। और अब देखिए आज के आदमी के मन को। अच्छे, बुरे का सब भेद मिटा दिया। बुरे को अच्छे के स्थान पर चढ़ा दिया। ऐसी दुनिया, ऐसा समाज कि अगर भगवान का नाम बच्चा ले, भगवान की ओर जाने लगे तो समाज में अच्छे-अच्छे कहलाने वाले माता-पिता कहते हैं—तू पागल हो गया है क्या? नहीं जाना उधर भगवान की तरफ़। तब एक हिरण्यकि ए होते थे प्रह्लाद को रोकने वाले। अब एकाध ही माता-पिता होंगे जो बच्चों को support करते हैं अगर वे भगवान की ओर जाने लगें।

स्वामी विवेकानन्द ने हमें एक बहुत ही विदारुण दृश्य दिखाया है कि आज काम और काञ्चन, ये सर्वश्रेष्ठ देवता हैं। इनके सामने कुछ नहीं। फिर वे कहते हैं—एक आदमी की ज़रूरत थी जो सारी दुनिया के सामने दिखा दे कि काम और काञ्चन से बाहर निकल कर भी जीवन पूर्णता से भरा हुआ, आनन्दपूर्ण, ज्ञानपूर्ण, पूर्णत्व से पूर्ण, किसी से भी किसी अंश में कमी नहीं, ऐसा जीवन एक आदमी जी सकता है। यह दिखाने के लिए एक आदमी की ज़रूरत थी।

भगवान आते हैं हम लोगों के लिए। पर हम लोग तो फिसलते ही जाते हैं। इसलिए उस युग की, उस ज़माने की जो माँग उठ खड़ी हो जाती है, उसको पूरा करने के लिए भगवान आते हैं।

देखो, राम ने एक पत्नीव्रत आदर्श दिखाया। भगवान श्रीकृष्ण ने दूसरे कई प्रकार के आदर्श दिखाए। कभी भगवान संन्यासी के वेष में भी आए। भगवान बुद्ध बनकर के आए, ईसामसीह बन करके आए, शंकराचार्य बनकर के आए। और फिर संन्यासी श्रेष्ठ कि गृहस्थ—यह एक नया विवाद खड़ा हो गया।

भगवान श्रीरामकृष्ण को आप किस दृष्टि से देखना चाहते हैं? सोचें। गृहस्थ संन्यासी? या दोनों आधे-आधे? आधा तो उनमें कुछ है ही नहीं किसी भी प्रकार से। कल्पना से अतीत आदर्श गृहस्थ हैं वे। सारदा देवी ही उसकी साक्षी हैं। जिनके कारण उनकी धर्मपत्नी का मन चौबीसों घण्टे आनन्द-पूर्ण रहा, जिनकी पत्नी उन्हें साक्षात् परब्रह्म के रूप में देखे और जो अपनी पत्नी को परब्रह्म के रूप में देखे—इस आदर्श से ऊपर किसी भी कल्पना की कोशिश कीजिए ज़रा।

धर्म की दृष्टि से देखिए । एक-एक पंथ का दिग्दर्शन महापुरुषों ने किया । भगवान श्रीकृष्ण ने कई पंथों का दिग्दर्शन किया । कुछ अपने जीवन में, कुछ अपनी वाणी में । ऋग्वेद में है—'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति' । गीता में है—'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्', मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्या: पार्थ सर्वशः' (गीता—4/11) भगवान कृष्ण ने कह दिया और अर्जुन ने मान लिया । और आजकल की दुनिया, हम लोग—देखे बिना मानेंगे नहीं । आपकी बात ठीक हो भी सकती है, नहीं भी, हम यों नहीं मानेंगे । ऐसी कल्पना तक पृथ्वी के उद्भव से आज तक किसी के मन में आई है कि भगवान की साधना जितने प्रकार से की जा सकती है, उतने प्रकार से एक जीवन में करके फिर मुँह से कहना कि 'जितने मत हैं, उतने पथ'! कल्पना ही नहीं की थी किसी ने । जरूरत ही नहीं पड़ी थी।

आज के परिप्रेक्ष्य में हम देखें कि आदमी का मन इससे अपनी संकुचितता से बाहर निकल सकता है कि नहीं। श्री रामकृष्ण देव के शिष्य कहा करते थे कि काम और काञ्चन के प्रति जिस आसक्ति को वे जितना दूषणीय समझते थे, उससे next उनके मन में यदि कोई दूषण वाक्य होते थे तो यही शब्द कि 'तू तो बड़ा एकांगी है रे!' यह एकांगिता, संकुचितता, यह आज की दुनिया का सबसे बड़ा खतरा। इसीलिए वे अपने शिष्यों को थोड़ा भी ऐसा देखते तो गाली जैसा कहते थे, 'तू तो बड़ा एकांगी है रे!'

निर्विकल्प समाधि की बात उपनिषदों में इधर-उधर कहीं झलकती है। किन्तु किसी भी उपनिषद् में कहीं कल्पना भी है क्या कि एक ही बार में आदमी छः महीने निर्विकल्प समाधि में रहे? और उसके बाद के पूरे जीवन में अभी समाधि में हैं तो अभी बाहर। कल्पना करें ज़रा। आदमी का मन और मनुष्य-रूप में अवतीर्ण आदर्श। बस यह हमको देखना है और तुलना आदि कुछ नहीं करनी। हमको अपना मन एकाग्र करने के लिए कितने जन्म लग जाएँ, कोई पता नहीं।

और श्री श्रीरामकृष्ण वचनामृत (कथामृत) खोलकर देखिए। मास्टर महाशय देख रहे हैं कि श्री रामकृष्ण बच्चों के साथ हँसी-मज़ाक कर रहे हैं। हँसी-मज़ाक! हँसी मज़ाक में हमारा मन कितना शिथिल हो जाता है। और उनकी परवर्ती क्षण निर्विकल्प समाधि!

फिर आप कोई भी भाव ले लीजिए। सख्य भाव, वात्सल्य भाव, मधुर भाव, जो भी आप लें। या योगियों के मन की स्थिरता। उस ज़माने का हर एक सम्प्रदाय वाला, उसके मन पर दो प्रकार से प्रभाव होता था। एक तो यह कि—ये तो हमारे हैं जी। हमारे ही सम्प्रदाय के हैं। हम जैसा हिर-कीर्तन करते हैं, वैसा ही ये करते हैं। पर हमारे सम्प्रदाय का आदमी यहाँ तक पहुँच सकता है, हमने कल्पना भी न की थी। यह हमारी सारी पूर्णत्व की कल्पनाओं के परे है। और निराकारवादी कहेंगे, ये तो हमारे हैं। स्वामी विवेकानन्द ने एक बार कहा था—मैं उस गुरु का शिष्य हूँ जो आए ही थे द्वैत, अद्वैत और विशिष्टाद्वैत में सामंजस्य दिखाने। वे तीनों की पूर्णता दिखाने आए।

श्री रामकृष्ण का देखिए, intensity of his Vedantic experience और variety । दुनिया में कौन-सा भाव उठा जो

श्रीरामकृष्ण ने नहीं दिखाया अपने जीवन में। दुनिया में तो यही देखने में आया है कि जो intense होते हैं, वे संकुचित होते हैं और जो broad होते हैं, वे shallow होते हैं। Variety नहीं, intensity in every variety. ऐसा मधुर भाव का दृश्य राधा में और चैतन्यदेव को छोड़कर दुनिया ने और किसी में नहीं देखा। पर इन दोनों में दूसरा और कोई भाव नहीं देखा। राधा वाला, चैतन्य वाला मधुर भाव परिपूर्ण मात्रा में है इनमें। कोई भी भाव देखिए—वात्सल्य भाव, सख्य भाव, सब परिपूर्ण मात्रा में है श्रीरामकृष्ण में। अद्भुत-सी प्रयोगशाला। उसका उद्देश्य हम सोचें। कि यदि हममें अध्यात्म स्पृहा है तो दुनिया के किसी भी प्रकार के वाद-विवाद में, कलह में, संकुचितता में, असमंजस में, उलझन में पड़ने की ज़रूरत नहीं रह गई।

कोई एक सही और दूसरा गलत नहीं होता। कोई एक श्रेष्ठ और दूसरा किनष्ठ नहीं होता, यह मुँह से कहने की ज़रूरत नहीं रही। और फिर किसी भी रास्ते से अध्यात्म जीवन में कितना पूर्णत्व हासिल किया जा सकता है, कितना आगे बढ़ा जा सकता है, यह दिखाया श्रीरामकृष्ण ने।

•

## Household Life and Steps Required to Attain Lord Fix Your Mind on the Lord

**Shri Ramakrishna** (to a Bhramo devotee)— "There is nothing wrong in living as a householder as you are. Even so, you have to fix your mind on the Lord. Otherwise, it won't do. Do your work with one hand and hold the Lord with the other. When you finish your work, you will hold God with both the hands."

#### Faith in the name of the Lord

**Shri Ramakrishna**— "It is the mind that binds and it is the mind that liberates. I am a free soul; I may live in the household or in the forest; there is no bondage for me. I am the child of the Lord, the son of the king of kings; who will bind me then? When bitten by a snake, if you say loudly, 'There is no poison in it,' you are rid of the venom. In the same way if you say emphatically, 'I am not bound; I am free,' you become like that. You become liberated.

There should be such faith in the name of the Lord,

'I have chanted His name, shall I be a sinner still? What sin for me! What bondage for me!'

— Sri Sri Ramakrishna Kathamrita-I

### पंडित रामेन्द्र सुन्दर भक्तितीर्थ भट्टाचार्य की श्रीरामकृष्ण देव विषयक पवित्र स्मृतियाँ

संकलक - स्वामी तन्निष्रानन्द रामकृष्ण मठ, नागपुर —विवेक ज्योति, 2 फरवरी, 2019 पृ० 11-14

[यथाविधि अनुमति-प्राप्ति के पश्चात् अब 'नूपुर' में प्रकाशित]

पण्डित रामेन्द्र सुन्दर भक्तितीर्थ भट्टाचार्य जी का जन्म अक्तूबर १८७६ में हुआ । वे कलकत्ता हाथिबागान स्थित संस्कृत वेद विद्यालय के संस्थापक तथा प्रधान अध्यापक थे। उन्होंने इस पाठशाला में साठ वर्ष तक भारतीय तत्वज्ञान का अध्यापन किया । भारत सरकार ने उन्हें १९७१ में आदर्श शिक्षक पुरस्कार से सम्मानित किया। १९६० में उनका 'श्री श्रीरामकृष्ण भागवतम् ग्रन्थ' प्रकाशित हुआ । श्रीरामकृष्णदेव ने उन्हें स्वप्न में आदेश देकर ग्रन्थ लिखने के लिए प्रेरित किया था । इस ग्रन्थ में ५००० संस्कृत श्लोक हैं । १००० पृष्ठों के इस ग्रन्थ में ३१ अध्याय हैं। आदि, मध्य, अन्त्य लीला; ऐसे इस महाकाव्य का क्रम है। रामकृष्ण संघ के दशम संघाध्यक्ष स्वामी वीरेश्वरानन्दजी महाराज ने इसकी प्रस्तावना लिखी है तथा भारत सरकार ने ग्रन्थ मुद्रण हेत् अनुदान दिया था । पण्डित रामेन्द्र सुन्दर भक्तितीर्थ भट्टाचार्य जी के वंश में संस्कृत महापण्डितों की परम्परा थी। उनके पिताजी श्री यदनाथ सरकार शास्त्र के पण्डित थे। १८८२ में वे अपने पिताजी के साथ दक्षिणेश्वर गए थे, तब उन्हें श्रीरामकृष्ण देव के दर्शन तथा आशीर्वाद प्राप्त हुए थे।

हमारा निवास-स्थान बंगाल के मेदिनीपुर ज़िले के खुणबेडीया गाँव में था। यह गाँव कामारपुकुर से बीस मील दूर था। मेरे पिताजी और श्रीठाकुर (श्रीरामकृष्ण देव) बचपन से ही एक दूसरे को पहचानते थे। उनमें विशेष मित्रता थी। पिताजी साल में दो-तीन बार कलकत्ता आते थे। गाँव लौटते समय वे ठाकुर से मिलने जाते थे। कमारपुकुर में उनका कुछ सन्देश पहुँचाते और ठाकुर का कुशल समाचार भी बताते थे। जब मैं आठ बरस का था, तब मेरे पिताजी मुझे दक्षिणेश्वर के काली मन्दिर में दर्शन के लिए ले गए। सम्भवतः तब ग्रीष्म ऋतु थी। एक दिन सुबह उन्होंने मुझसे कहा, "चलो, तुम्हें एक जगह ले चलता हूँ। वहाँ तुम्हें जगन्माता काली का मन्दिर और जीवित भगवान के दर्शन होंगे।

दक्षिणेश्वर में जगन्माता का दर्शन करने के बाद पिताजी मुझे ठाकुर के पास ले गए । ठाकुर तब अपने कक्ष में नहीं थे । एक व्यक्ति ने बताया कि वे पञ्चवटी में हैं। हम उधर गए। संभवत: वे दो-तीन युवकों के साथ गंगा-दर्शन कर रहे थे । पिताजी को देखकर ठाकुर बहुत प्रसन्न हुए । एक-दूसरे ने कुशल प्रश्न पुछा । पिताजी ने ठाकुर को साष्टांग प्रणाम किया । उनकी चरण-रज अपने और मेरे माथे पर लगायी । मुझे कहा, "मैने तुम्हें कहा था कि जीवित भगवान के दर्शन कराऊँगा ! देखो, भगवान तुम्हारे सामने हैं।" उन्होंने मेरा मस्तक ठाकुर के चरणों में रखा। मैने भी उन्हें साष्टांग प्रणाम किया । ठाकर ने मेरे सिर पर हाथ रखते हुए कहा, "उठो, बेटा उठो !" मेरे उठकर खड़े होने पर उन्होंने कहा, "तुम दीर्घाय तथा बड़े पण्डित होओगे।' उनके चरणों में नतमस्तक होने से लेकर आशीर्वाद देने तक मैं अन्य भाव में था । मेरी बाह्य संज्ञा लुप्त हो गयी । किन्तु उनकी आशीर्वाणी मेरे कानों में प्रवेश कर गयी थी । बहुत समय तक वह ध्विन मेरे कानों में गुँजती रही । उन्होंने हमें खाने के लिए मिठाई दी। हमने गंगा के पास जाकर मिठाई खायी और गंगाजल पान किया। उस दिन हम अधिक समय तक रुक नहीं सके थे, इसलिए ठाकुर को दुःख हुआ । हम जब मन्दिर प्रांगण के बाहर आए, तो मैंने पिताजी से पूछा, "ठाक्र आपके पिता हैं या काका ?" उन्होंने उत्तर दिया. "बेटा. वे सभी के पिता हैं—जैसे चन्दा मामा सबके मामा हैं!

जगत्कल्याण के लिए जगत्पिता स्वयं भगवान श्रीरामकृष्ण देव के रूप में बैकुण्ठ से पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए हैं।"

श्री ठाकुर का पार्थिव शरीर में वही मेरा प्रथम और अन्तिम दर्शन था। तब मेरी आयु बहुत कम थी। फिर भी आज मुझे उनका चेहरा याद आता है। उनका कद ऊँचा था। शरीर सुगठित और सौम्य कान्ति का था। उनका मुखमण्डल मन्द स्मित से उज्ज्वल था। दिखने में वे गौर वर्ण नहीं थे, पर त्वचा चमकदार थी। मेरे पिताजी कहते थे, "ठाकुर के शरीर की कान्ति सुवर्णमय थी। कठोर साधना से उनकी देह क्षीण हो गई थी और उज्ज्वल वर्ण भी मलिन हो गया था।"

शत-शत जन्मों के सुकृतों के फलस्वरूप मुझे एक बार ठाकुर के दर्शन हुए थे। पर उसी से मैं धन्य हो गया। एक-डेढ़ साल बाद जैसे मैंने उन्हें देखा था, वैसे ही स्वप्न में आविर्भूत होकर उन्होंने मुझे कहा, "अरे बेटा, तुम ठीक हो तो! यह देखो, मैं वापस जा रहा हूँ।" यह सुनकर मेरा शरीर रोमाञ्चित हो गया। बाद में पता चला कि उसी रात ठाकुर की महासमाधि हुई थी।

श्री ठाकुर हर डेढ़-दो साल के अन्तराल में मुझे स्वप्न में दर्शन देते थे। वे कहते थे, "बेटा ठीक तो हो।" स्वप्न में दर्शन पाकर मेरा शरीर रोमाञ्चित होता था और मैं उठकर बैठ जाता था। अनेक वर्ष ऐसे ही बीत गए। मैंने संस्कृत पण्डित और उत्कृष्ट वक्ता के रूप में ख्याति प्राप्त कर ली थी। तब मेरी उम्र पचास साल की होगी। मेरी संस्कृत पाठशाला में १०-१५ विद्यार्थी निवास कर शास्त्र-अध्ययन करते थे। एक बार सारे विद्यार्थी परीक्षा देकर अपने घर गए थे। मैं वहीं पुस्तकालय की रखवाली करते हुए सो रहा था। रात में करीब दो बजे ठाकुर स्वप्न में आए और दर्शन देकर कहा, क्यों रे पण्डित, ठीक तो हो? आज अच्छे से सुनो।' ऐसा कह कर उन्होंने एक संस्कृत श्लोक का उच्चारण किया। वह श्लोक इस प्रकार है:

मल्लीला विलिख त्वं भो देवभाषा युतां सुधीः ॥ त्वामहं संवदिष्यामि मा भैषीः पण्डितो भवान् ॥ (अर्थात् तू मेरी लीला का वर्णन देवभाषा संस्कृत में कर, मैं तुम्हारा मार्गदर्शन करूँगा । घबराओ मत । तुम अच्छे पण्डित हो ।)

उन्होंने मुझे यह श्लोक तीन बार उनके साथ बोलने को कहा और अन्तर्धान हो गए। मुझे वह श्लोक याद हो गया। मैने नींद से जागकर दिया जलाया और कागज़ पर वह श्लोक लिखकर रखा । फिर मैं सोचने लगा कि ठाकुर ने तो मुझे कहा है, "अरे पण्डित, तु संस्कृत भाषा में मेरा चरित्र लिख" पर मैं तो उनके बारे में कुछ भी नहीं जानता। बचपन में एक ही बार उन्हें देखा था। मैं उनसे मन-ही-मन बात करने लगा—"ठाकुर, आज इतने साल मैंने कभी भी आपकी लीला के विषय में चिन्तन नहीं किया. मझे कछ भी पता नहीं, कहीं गया नहीं, कछ देखा नहीं, तब कैसे आपका चरित्र लिखुँ ?" अशरीरी वाणी ने उत्तर दिया, "तुम तो पण्डित हो । कालिदास जैसे पण्डितों ने पर्वत, आकाश, हवा, इतना ही नहीं, अपित पश्-पक्षियों के जीवन का वर्णन किया है, मैं तो एक मनुष्य हूँ। मेरे जीवन का वर्णन तुम निश्चित ही कर सकोगे। तुम डरो मत, चिन्ता मत करो, मुझे जानने वाले बहुत लोग दक्षिणेश्वर तथा कामारपुर में हैं । बेलूड़ मठ में रहने वाली मेरी सन्तानों से तुम्हें जानकारी मिल जाएगी। मैं भी इसी प्रकार घटनाओं तथा सत्यता सम्बन्धी शंकाओं का समाधान करूँगा। मेरी आँखों से अश्रु बहने लगे । मैंने कहा, हे प्रभो, आपकी मेरे ऊपर अपार करुणा है ! अनन्त दया है ! मेरे जैसे संसारी, दीन-दरिद्र, अधम मनुष्य पर आपने असीम कृपा की है। तद्परान्त मैंने दक्षिणेश्वर और कामारपुकर के लोगों से कुछ सत्य घटनाओं का संकलन किया । किन्तु संसार और अध्यापन-कार्य में व्यस्त रहता था। ठाकर की सन्तानों से भी अधिक भेंट न हो सकी।

किन्तु स्वामी विवेकानन्द जी से उनके विदेश से वापस आने के बाद मिला था। स्वामीजी के स्कोटिश चर्च कॉलेज के एक अध्यापक मुझे बहुत स्नेह करते थे। वे बंगाली ईसाई थे। वे स्वामीजी को भी बहुत स्नेह करते थे तथा उनके सम्बन्ध में अध्यापक महाशय की अति उच्च धारणा थी। मेधावी छात्र नरेन्द्रनाथ ने एक पुजारी का शिष्यत्व ग्रहण किया है, इस समाचार को सुनकर वे अत्यन्त निराश हुए थे। एक बार उन्होंने मुझे स्वामीजी और ठाकुर के संस्मरण बताए—स्वामीजी (नरेन्द्रनाथ) संन्यास लेने के बाद अध्यापक जी से मिलने गए। तब अध्यापकजी ने स्वामीजी से कहा, "अच्छा नरेन! तुमने यह क्या किया! अन्ततः तुमने एक पागल पुजारी के पास अपना सिर मुंडवाया! यह भी सुनने में आया है कि तुम लोग उस पुजारी को जगत्-कल्याण हेतु अवतीर्ण भगवान मानते हो? तुमने इन गाँजा पीनेवालों की बातों पर विश्वास कर लिया !" स्वामीजी ने उन्हें शान्त भाव से कहा, "सर, आपने ठीक ही सुना है, मैं स्वयं उन्हें ईश्वर मानता हूँ। वे जगत् के कल्याण हेतु धरती पर अवतीर्ण हुए हैं, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है । पहले मैं भी आपकी तरह इन बातों को गाँजा पीनेवालों की ऊटपटांग बातें समझता था । श्रीरामकृष्ण देव के सामने यह सब बोलता भी था। पर वे एक बालक थे। मेरी बातें सुनकर छोटे बालक के समान हँसते और कहते. 'तुम्हें क्या मैं विश्वास करने के लिए कहता हँ ?' किन्तु सर, अन्त में मुझे विश्वास करना ही पड़ा । उन्होंने मुझे दिखा दिया कि स्वयं भगवान ही श्रीरामकृष्ण देव के रूप में अवतीर्ण हुए हैं। उन्होंने मुझे एक बार रामरूप में तथा एक बार कृष्ण रूप में दर्शन दिया है तथा राम और कृष्ण उनके शरीर में विलीन होते हुए दर्शन कराए हैं, यह मैने प्रत्यक्ष देखा है । इसमें कोई आभास या भ्रम नहीं था । मैने उन्हें अनेक प्रकार से देखा है और निश्चित जानता हुँ कि वे स्वयं भगवान हैं।" अध्यापकजी ने स्वामीजी की यह बात बताकर मुझे कहा, "नरेन्द्रनाथ को मैं अच्छे से जानता था, वह जादुगरी पर विश्वास नहीं करेगा । उस दिन समझ में आया कि नरेन ने अन्धविश्वास से ठाकुर को भगवान के रूप में स्वीकार नहीं किया था । बाद में ठाकर के जीवन से यह प्रमाणित हो गया कि वे असाधारण थे।"

इस प्रकार थोड़ी ही घटनाओं को जान सका था। अनेक बार दर्शन देकर ठाकुर मुझे चिरत्र लिखने को कहते। पर मैं ठाकुर के आदेश को एक स्वप्न ही समझता था। ऐसे वर्षों बीत गए और मैंने कुछ भी नहीं किया। जब मेरी उम्र ८० साल की थी, तब ठाकुर ने फिर से उनका जीवन संस्कृत काव्य में लिखने का आदेश दिया। मैंने मेरे भग्न स्वास्थ्य और अधिक उम्र का बहाना बनाया। किन्तु उन्होंने कहा, "तुम बिल्कुल चिन्ता मत करो। तुम केवल लिखना प्रारम्भ करो।" विश्वास करना किठन है, पर उनके आशीर्वाद से ८४ साल की उम्र में मैंने 'श्रीरामकृष्णभागवतम्' नामक महाकाव्य लिखकर पूर्ण किया। उन्होंने ही काव्य लिखते समय मेरे सन्देहों का निराकरण किया और आवश्यकता होने पर निर्देश भी दिए। मैं एक दिरद्र ब्राह्मण, कैसे ग्रन्थ को प्रकाशित करता? पर ठाकुर ने वह मार्ग भी प्रशस्त कर दिया। भारत सरकार ने इस महाकाव्य के प्रकाशन के लिए अनुदान दिया।

श्रीरामकृष्ण देव का चिरत्र सबको ज्ञात है । मैंने 'श्रीरामकृष्णभागवतम्' ग्रन्थ को स्वामी सारदानन्द जी द्वारा लिखित श्रीरामकृष्णलीलाप्रसंग ग्रन्थ को प्रमुख आधार बनाकर लिखा । एक-दो घटनाएँ मुझे प्रामाणिक रूप में मिली हैं, जिन्हें मैं आपके सामने रखना चाहता हुँ।

कामारपुकुर के धनाढ्य जमींदार श्री लाहाबाबू के घर श्राद्ध के निमित्त धर्मसभा का आयोजन था। सभा में अनेक गणमान्य पण्डित उपस्थित थे। सभा में अचानक एक ब्राह्मण युवक आकर खड़ा हुआ। उसने सारे पण्डितों को उद्देश्य कर कहा, 'मुझे बीस साल से पेट दर्द की पीड़ा है। मैंने सब प्रकार की औषधि-चिकित्सा की, पर कोई लाभ नहीं हुआ। इसलिए बाबा तारकनाथ के चरणों में धरना देकर बैठ गया। बाबा तारकनाथ जी ने रात को सपने में दर्शन दिए और कहा, "तुम्हारे गाँव के बाहर एक गोमांस भक्षक चाण्डाल रहता है। तुम स्नानादि करके भक्तिभाव से चाण्डाल को प्रणाम कर उसका चरणामृत ग्रहण करो तथा सादर उसका उच्छिष्ट प्रसाद ग्रहण करो। इसी से तुम्हारा रोग दूर होगा। किन्तु हे पण्डितगण, ऐसा आचरण करने पर समाज मुझे बहिष्कृत करेगा। अब आप लोग ही बताइए कि मैं कैसे बाबा तारकनाथ की आज्ञा का पालन करूँ, जिससे मेरा रोग भी दूर हो जाए और मुझे बहिष्कृत भी न होना पड़े।"

पण्डितों का इस विषय पर गहन तर्क आरम्भ हुआ। इस सभा में बालक गदाधर भी था। उसने पण्डितों के सामने आकर विनम्रता से कहा, "आप अगर अनुमित दें, तो मैं कुछ कहना चाहता हूँ।" पण्डितों से अनुमित मिलने पर बालक गदाधर ने कहा, "अगर वह व्यक्ति उस चाण्डाल को लेकर पुरुषोत्तम क्षेत्र जगन्नाथ पुरी जाए और उसे भगवान जगन्नाथ का प्रसाद देकर उसका उच्छिष्ट अन्नप्रसाद ग्रहण करे, तो बाबा तारकनाथ के आदेश का पालन होगा एवं जाति- बहिष्कृत भी न होना पड़ेगा।" बालक का विचार सुनकर पण्डितगण अचिम्भित हो गए। बालक गदाधर को आशीर्वाद देकर उन्होंने कहा, "बेटा, तुम असाधारण व्यक्ति हो! तुममें हम जगद्गुरु के लक्षण देख रहे हैं। भविष्य में यह प्रमाणित होगा।" श्रीरामकृष्णलीला प्रसंग में इस घटना का वर्णन है, पर प्रश्न का उल्लेख नहीं है। ठाकुर ने मुझे स्वप्न में जो घटनाएँ बताई थीं, उनमें से एक

बताता हुँ । ठाकुर ने स्वप्न में एक दिन कहा, "अरे पण्डित, तुम तो जानते हो कि मैं एक मूर्ख (अशिक्षित) व्यक्ति हुँ, पर बाहर से दिखनेवाली मूर्खता मेरा छद्मवेश है । एक बार मैंने युवा भक्त बैकुण्ठनाथ सान्याल से कहा, "तुम रामायण से शबरी उपाख्यान पढ़ो । बैकुण्ठ ने मूल संस्कृत रामायण न पढ़कर बंगाली अनुवाद पढ़ना शुरु किया । मैंने उससे कहा, 'तुम मूल संस्कृत पाठ पढ़ो ।' यह सुनकर बैकुण्ठ आश्चर्यचिकत होकर मुझे निहारने लगा । उसे लगा कि मुझ जैसे निरक्षर व्यक्ति को वाल्मीकि की संस्कृत रामायण कैसे समझ में आएगी ? तब मैंने बैकण्ठ से कहा. 'रामायण में जिनकी कथा वर्णित है, वह तो मुझमें है । इसीलिए रामायण में जो लिखा है. वह सब मुझे ज्ञात है । उसके बाद बैकुण्ठ को रामायण के अरण्यकाण्ड के ७४ अध्याय के मूल श्लोक सुनाये। अब पण्डित, तुम भी सुनो।' ठाकर ने मुझे वे सारे श्लोक स्पष्ट उच्चारण और लयबद्धता के साथ सुनाए। उनके श्रीमुख से संस्कृत के श्लोक इतने अपूर्व भाव से सुनकर मैं स्तम्भित हो गया। तदुपरान्त ठाकुर ने कहा, "बैकुण्ठनाथ तो मेरे मुख से श्लोक सुनकर (छिपकली के मुख में चुना देने के समान) स्तब्ध हो गया था ! उसके मुख से शब्द ही नहीं निकल रहे थे ! क्योंकि वह प्रत्यक्ष प्रभ् श्रीरामचन्द्र, लक्ष्मण और शबरी को देख रहा था। थोड़ी देर बाद प्रकृतिस्थ होकर मुझे प्रणाम कर फिर बैकण्ठ मल संस्कत रामायण का पाठ करने लगा । पण्डित तम भी देखो, रामचन्द्र रूप में मैंने शबरी पर कैसे कृपा की !' मुझे भी उन्होंने कुपापूर्वक सब दिखाया।

समाज के विद्वान् तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने इस 'श्री श्रीरामकृष्णभागवतम्' महाकाव्य की सराहना की है। इसमें तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्रीमती इंदिरा गाँधी और रामकृष्ण संघ के महाध्यक्ष श्रीमत् स्वामी वीरेश्वरानन्दजी महाराज प्रमुख हैं।

'श्री श्रीरामकृष्णभागवतम्' महाकाव्य के विषय में स्वामी वीरेश्वरानन्द जी महाराज लिखते हैं, "संस्कृत भाषा में लिखा हुआ श्रीरामकृष्णदेव का चरित्र बहुत मधुर है और समझने में सुगम है। इस महाकाव्य से एक महापुरुष के जीवन का परिचय तथा संस्कृत भाषा का प्रचार, ये दोनों उद्देश्य पूर्ण होते हैं।" आज मेरी दृढ़ धारणा है कि उनकी कृपाकटाक्ष से गूंगा व्यक्ति बोल सकता है और पंग् हिमालय चढ़ सकता है। वे नरदेह में साक्षात् भगवान थे। उनके स्पर्श ने मुझे अनन्त सौभाग्य का अधिकारी बनाया.। पण्डित रामेन्द्र सुन्दर भट्टाचार्य प्रणीत 'श्रीरामकृष्णभागवतम्' महाकाव्य से सम्बन्धित कुछ अन्य बातें:

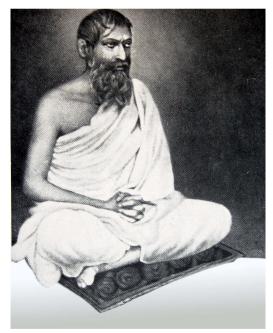
पण्डित रामेन्द्र सुन्दर भट्टाचार्य ने अपने ग्रन्थ में त्रेतायुग तथा द्वापरयुग में भगवान के जो लीला सहचर थे, वे किलयुग में श्रीरामकृष्ण अवतार में कौन-कौन थे, इसका बहुत सुन्दर वर्णन किया है। श्रीराम और श्रीकृष्ण दोनों ही गदाधर के रूप में अवतीर्ण हुए। लेखक ने अवतारों के कार्यो का तुलनात्मक विश्लेषण निपुणता से किया है। जैसे—महाबली हनुमान ने प्रभु श्रीरामचन्द्र का कार्य सम्पादन करने के लिए समुद्रलंघन किया। उसी प्रकार नरेन्द्रनाथ (स्वामी विवेकानन्द) ने समुद्र पार कर पाश्चात्य जगत् के लोगों की आध्यात्मिक तृषा शमन करने हेतु श्रीरामकृष्ण देव की अमृतवाणी का प्रचार किया। श्रीराम ने रावण-वध के लिए समुद्र पार कराने हेतु सेतु निर्माण किया। श्रीरामकृष्ण देव ने संसाररूपी सागर पार कर शाश्वत सुख की प्राप्ति के लिए उपदेशामृत सेतु बनाया आदि। इस महाकाव्य में ऐसी कुछ घटनाओं का वर्णन है, जो हमने कभी सुनी नहीं, उनका निर्देश करना अप्रासंगिक न होगा।

लेखक लिखते हैं, "एक बार दक्षिणेश्वर के काली मन्दिर में रानी रासमणि का आगमन हुआ। श्रीरामकृष्ण देव काली मन्दिर में जगन्माता के सामने भजन गा रहे थे। भजन सुनकर रानी रासमणि बहुत आनन्दित हुईं। उन्होंने ठाकुर को और एक भजन गाने के लिए कहा। ठाकुर ने भजन गाना प्रारम्भ किया। भजन का भावार्थ इस प्रकार था—'हे जगन्माते, तुम सर्वदा शिव के वक्षस्थल पर पैर रखकर खड़ी हो। तुम्हें इससे लज्जा नहीं लगती? तुम जिह्वा बाहर निकालकर लज्जा का भाव प्रदर्शित तो करती हो! पर क्या तुम्हारी माँ भी इसी प्रकार तुम्हारे पिताजी की छाती पर खड़ी हैं?' रानी भजन तो सुन रही थी, पर उसका मन सांसारिक विचारों में था। उससे ठाकुर का कण्ठ अचानक अवरुद्ध हो गया और उनका भजन गाना बन्द हो गया। उन्होंने रानी के गाल पर जोर से थप्पड़ मारा और कहा, 'देवी के मन्दिर में भी मुकदमे के बारे में सोच रही हो!' इस घटना

का वर्णन अनेक पुस्तकों में है, पर भजन का उल्लेख इसी महाकाव्य में मिलता है।

एक बार रविवार को बलराम बोस के घर ठाकुर से मिलने अनेक लोग आए थे । उनमें ढाका विश्वविद्यालय के एक अध्यापक श्री नित्यगोपाल गोस्वामी भी थे। उन्होंने ठाकुर से कहा, "हम देवताओं को अलंकारों से विभूषित देखते हैं। आपके बारे में ऐसा कुछ भी नहीं है! आप की उंगलियों में एक चाँदी की अंगुठी तक नहीं है! मैं आपके लिए एक छोटा-सा गहना लाया हँ। कृपया इसे स्वीकार करें।' ठाकर ने उनसे कहा, "आपने जो कहा, वह सही है । पहले के तीन युगों में भगवान धरती पर अलंकारों से विभूषित होकर अवतीर्ण हुए थे। सत्ययुग में भगवान पद्मासन पर उपविष्ट होकर मुकुट-कुण्डल आदि आभूषणों से विभूषित हुए थे । त्रेतायुग में भगवान श्रीराम मुकुट आदि धारण कर अयोध्या के राजा बने । द्वापर यग में भगवान श्रीकृष्ण ने पीताम्बर परिधान लेकर शंख, चक्र, गदा, पद्म, कौस्तुभ आदि धारण किया था । कलिय्ग में भगवान नवद्वीप में श्रीचैतन्य देव के रूप में आविर्भृत हुए । उन्होंने स्वर्ण, रजत, मणि आदि रत्नालंकारों का त्याग कर संन्यास ग्रहण किया । चैतन्यदेव ने त्याग धर्म दिखाया.। मैंने भी उन्हीं की तरह कामिनी-काञ्चन का त्याग कर शाश्वत शान्ति की उपलब्धि की है। धातु का स्पर्श मुझे तप्त लोहे के स्पर्श के समान यातना देता है।"

ऐसी अलौकिक घटनाओं तथा मार्मिक स्पष्टीकरणों से परिपूर्ण यह 'श्री श्रीरामकृष्णभागवतम्' संस्कृत महाकाव्य निश्चय ही हम सबकी श्रद्धा और भक्ति वर्धित करेगा। इस ग्रन्थ को ऐतिहासिक दृष्टि से न देखते हुए इसका भक्तिपूर्ण अन्त:करण से अवलोकन करने से निश्चय ही यह हमारे लिए प्रेरणादायक होगा।



श्री म (मास्टर महाशय)

- पूरा नाम : श्री महेन्द्रनाथ गुप्त
- जन्म : शुक्रवार, नाग पञ्चमी, 31वाँ आषाढ़, 14 जुलाई, 1854 ईसवी।
- स्थान : कोलकता में शिमुलिया मोहल्ले की शिवनारायण दास लेन।
- माता-पिता : श्रीमती स्वर्णमयी देवी और श्री मधुसूदन गुप्त— वैद्य ब्राह्मण वंश।
- भाई-बहन : 4 भाइयों और 4 बहनों में तीसरी सन्तान।
- विवाह : सन् 1873 में श्रीमती निकुञ्ज देवी के साथ।
- शिक्षा : सन् 1867 में आठवीं कक्षा से डायरी लेखन।
  - हेयर स्कूल से दसवीं की परीक्षा में द्वितीय स्थान।
  - गणित का एक पेपर न दे सकने पर भी एफ.ए. में 5वाँ स्थान।
  - सन् 1875 में प्रेजिडैंसी कॉलेज से बी.ए. में तृतीय स्थान।
  - पूर्वी और पश्चिमी विद्याओं में निपुणता।
- गुरु : श्रीरामकृष्ण परमहंस
- गुरु-लाभ : 26 फरवरी, सन् 1882 को रविवार के दिन।
- महासमाधि : शनिवार, 4 जून, सन् 1932 ईसवी को प्रात: 5.30 बजे।

### श्री रामकृष्ण और श्री म

#### —दिलीप कुमार सेनगुप्त

मूल बंगला से हिन्दी-अनुवादः सन्दीप नांगिया नूपुर-2006 में प्रथम बार प्रकाशित

दिलीप कुमार सेनगुप्त श्री म की सेवक-सन्तान स्वामी नित्यात्मानन्द जी महाराज के शिष्य हैं। प्रस्तुत लेख 'श्री रामकृष्ण और श्री म' उनकी पुस्तक 'गुरु प्रणाम' में से लिया गया है। श्री श्री कथामृत के शताब्दी समारोह वर्ष सन् 1982 की नौ अप्रैल को उद्बोधन कार्यालय भवन में 'सारदानन्द हॉल में रामकृष्ण-विवेकानन्द साहित्य सम्मेलन में यह प्रबन्ध पढ़ा गया था।

इस प्रबन्ध में श्री म के सम्बन्ध में प्रचलित दो धारणाओं का पुनर्मूल्यांकन है :

श्री म ट्रस्ट इस प्रकाशित श्री श्री रामकृष्ण कथामृत सैन्टीनरी मैमोरियल के सह-सम्पादक तथा आकाशवाणी में डिप्टी डायरेक्टर जलरल के पद पर से सेवानिवृत्त श्री दिलीप कुमार सेनगुप्त श्री म की सेवक-सन्तान स्वामी नित्यात्मानन्द जी महाराज के शिष्य हैं। सन् 1991 में उन्होंने शरीर छोड़ दिया है।

इस लेख में सन्दर्भ बंगला पुस्तकों से ही लिए गए हैं।

प्रार्थना द्वारा आलोचना आरम्भ करने की रीति है। श्री रामकृष्ण-श्री म के महामिलन के इस शत वर्ष पर श्री म के सम्बन्ध में दो धारणाओं का पुनर्मूल्यांकन हो, यही है हमारी प्रार्थना।

पहली धारणा यह कि श्री म थे श्रीरामकृष्ण के गृही भक्तों में मात्र एक व्यक्ति । वे तो द्वितीय सोपान पर बिठाने के लिए ही उपयुक्त हैं, प्रथम सोपान पर बैठने योग्य हैं केवल एकजन गृहीभक्त — दुर्गाचरण नाग महाशय। और एक धारणा है कि श्री म कथित कथामृत में केवल गृहस्थों द्वारा अनुध्येय और अनुसरणीय उपदेशावली है । त्यागीभक्तों को

श्री रामकृष्ण जो सब निगूढ तत्त्वकथा कहते थे, चूँकि श्री म तो गृहस्थ हैं, उनके सामने ठाकुर वह कहते नहीं थे, इसलिए कथामृत में वह नहीं है।

ज्ञानवृद्ध संन्यासी स्वामी तपस्यानन्द ने मद्रास से प्रकाशित 'The Condensed Gospel of Sri Ramakrishna' ग्रन्थ की भूमिका में इस प्रसंग का उल्लेख किया है। उन्होंने वहाँ पर बहुत सुस्पष्ट करके कहा है कि अनेक कट्टरवादी लोग यह धारणा करे बैठे हैं कि कथामृत श्री म की रिववार की डायरी मात्र है। उन लोगों के मत में श्री रामकृष्ण के ऐसे अनेक उच्चतर धर्मोपदेश हैं, जिन्हें उन्होंने श्री म के सम्मुख प्रकाश नहीं किया। किन्तु हाय! इस प्रकार की धारणा का पोषण करने वालों ने बिल्कुल ही ख्याल नहीं किया है कि इससे कथामृत के बारे में स्वामी जी और श्री श्री माँ के प्रशस्तिवाक्यों को मिथ्या पर्याय कह देना हुआ। श्री म गृहस्थ थे, इसीलिए रामकृष्ण के उच्चभाव के उपदेशों को धारण करने के लिए उपयोगी सुयोग उनके भाग्य में नहीं था—इस प्रकार की बात का प्रत्युत्तर स्वामी तपस्यानन्द ने सुन्दर दिया है—पृथ्वी पर यदि इस प्रकार का कोई भी शास्त्र है, जो इस देव मानव की ठीक-ठीक उपदेश-वाणी के एकदम इतना समीप है, तो वह है यही श्री म की डायरी और वह एकमात्र श्री म की ही है।

इसके बाद वही द्वितीय धारणा । श्री म थे श्रीरामकृष्ण के द्वितीय सोपान के गृहीभक्तों में अन्यतम । किन्तु वह कैसे ? यही जो (बंगाली) कथामृत के चौथे भाग के ९९ पृष्ठ पर है [२० जून १८८४ (४-१४-१)]:

"श्री रामकृष्ण—भक्त जो यहाँ आते हैं—दो प्रकार के हैं। एक वे हैं जो कहते हैं—हे ईश्वर,मेरा उद्धार करो! और एक प्रकार के हैं, जो हैं अन्तरंग। वे ऐसी बात नहीं कहते। इनका दो बातें जान लेने से ही होगा। प्रथम, मैं कौन ? और उसके बाद वे कौन—मेरे संग उनका सम्बन्ध क्या है ? तुम इस दूसरी प्रकार के हो।"

और फिर कथामृत चतुर्थ भाग, पृष्ठ १९८ (४-२२-१) पर पृष्ठ १९८ पर: १८८४ की ५ अक्तूबर को दक्षिणेश्वर में मास्टर को कह रहे हैं बड़े काली और रामलाल की उपस्थिति में।

"श्री रामकृष्ण — शुद्धाभक्ति में कोई कामना रहेगी नहीं। तुम यहाँ से कुछ नहीं चाहते तब भी प्यार है—इसका नाम है अहैतुकी भक्ति, शुद्धा भक्ति। प्रह्लाद की यही थी; राज्य नहीं चाहिए, ऐश्वर्य नहीं चाहिए केवल हिर को चाहता है।"

श्री म के सम्बन्ध में यह जो कहा है वह तो चूडान्त है। उसी बैठक में ही कुछ आगे वे हाजरा के सम्बन्ध में कह रहे हैं: "मैं कहता हूँ, कामनाशून्य भक्ति, अहैतुकी भक्ति—इससे बड़ा और कुछ नहीं। यह बात वह हाजरा काट देता है।"

इससे निश्चित है, श्री रामकृष्ण की कृपा से श्री म ने अहैतुकी भक्ति प्राप्त की, जिससे बड़ा और कुछ भी नहीं है।

इसके अतिरिक्त, कथामृत के पञ्चम भाग में ५८ पृष्ठ पर, राखाल, मास्टर प्रभृति के संग में बलराम मन्दिर में उपविष्ट हुए श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं (५-७-२), २५ जून १८८३—

"देखो आन्तरिक पुकारने से स्व-स्वरूप को देखा जाता है। किन्तु जब तक विषय-भोग की वासना है, तब तक कमी रह जाती है।

मास्टर—आप जो कहते हैं, छलाँग लगानी होगी।

श्री रामकृष्ण—(आनन्दित होकर) यही।

सभी चुप हैं, ठाकुर फिर बातें करते हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति)—देखो, सभी को आत्मदर्शन हो सकता है।"

कथा में जो श्री म को सीधा-सीधा कहा है, माने तुम्हें भी आत्मदर्शन होने में बाधा नहीं—यही तो श्री म समझना चाहते हैं। संसार में हैं, जानकर सर्वक्षण इस प्रकार लज्जित हुए जो रहते हैं, उनको जो आत्मसाक्षात्कार सम्भव है, यही तो जानना चाहते हैं।

मास्टर बोले, "जी, तब भी ईश्वर कर्त्ता हैं, वे जैसा चाहें करवाएँगे । किसी को चैतन्य करेंगें, किसी को अज्ञान में रखेंगे ।" श्री रामकृष्ण तभी बोले—"ना, उनको व्याकुल होकर प्रार्थना करने से होता है। आन्तरिक होने से वे प्रार्थना सुनेंगे ही सुनेंगे।"

श्री रामकृष्ण की इस स्वीकृति के बाद उनके आश्वास-वाक्य सुन पाता हूँ। कथामृत प्रथम भाग २०९ पृष्ठ पर (१-१५-१, २२ अक्तूबर १८८५):

"यदि कहो, संसार आश्रम के ज्ञानी और संन्यास आश्रम के ज्ञानी, इन दोनों में फर्क है क्या ?"

यही प्रश्न तो हमारे भी मन में उठ रहा है।

श्री रामकृष्ण कह रहे हैं, "उसका उत्तर यही जो, दोनों ही एक वस्तु। यह भी ज्ञानी, वह भी ज्ञानी—एक वस्तु। तब भी संसारी ज्ञानी को भय है। काजल के घर में रहते हुए जितना ही सयाना क्यों न हो, कुछ न कुछ शरीर पर तो लगेगा ही।... तो भी, यदि संसारी ज्ञानी के शरीर पर दाग रहे भी, उस दाग से कोई क्षति नहीं होती। चन्द्रमा में कलंक है चाहे, किन्तु आलोक में व्याघात होता नहीं।"

इस विषय पर श्री म ने क्या कहा, यह कथामृत में मिलता नहीं है। जाना होगा श्री म दर्शन ग्रन्थावली में । श्री म दर्शन नवम भाग १५८ पृष्ठ पर है (९-१५-१):

"श्री म – हम कहते हैं, एक ही बार में दोनों होते हैं कि नहीं, ज्ञान और भक्ति ? ठाकुर उत्तर देते हैं, होगी क्यों नहीं ? एक ही आकाश में चन्द्र, सूर्य देखे जाते हैं। प्रह्लाद का नाम लिया। उनकी दोनों ही थीं। उनकी कृपा से हमें भी दोनों ही दिखा दी हैं... ब्रह्मज्ञान और भक्ति दोनों ही।"

फिर चलते हैं कथामृत के चौथे भाग के २२१ पृष्ठ पर (४-२०-४, १४ जुलाई १८८५)। व्युत्थित हुए श्री रामकृष्ण मास्टर को कह रहे हैं, "क्या देखा! ब्रह्माण्ड एक शालग्राम । उसके भीतर तुम्हारे दो चक्षु देखे।" भक्त सब अवाक्।

बोलने से क्या होगा, ठाकुर की जो बात । ब्रह्माण्ड कोई शालग्राम नहीं, और उसमें श्री म के दो चक्षु रहना भी सम्भव नहीं । इसमें तो सन्देह नहीं । अन्ततः उसी तारीख में – १८८५ की १४ जुलाई—श्री म ऐसे शुद्ध हैं जो, उनको देख कर श्री रामकृष्ण को इस प्रकार के दर्शन का उद्दीपन हुआ ? वे यदि घर में छुपकर गुड़ की ढेली खा रहे हैं, तो वैसा सम्भव नहीं होता ?

उसके डेढ. बरस पहले दिसम्बर १८८३ (कथामृत २-११-२, ९ दिसम्बर १८८३, पृष्ठ ८१) श्री म जब दक्षिणेश्वर में श्री रामकृष्ण के पास रहकर साधना कर रहे थे, तब श्री म को देखकर कहा था 'तुम्हारा शीघ्र होगा ।' और फिर कहा, "तुम्हारा समय हो गया है।... जो 'घर' बोला है तुम्हारा वही 'घर' है। ...सभी को जो बहुत तपस्या करनी होगी, वैसा नहीं है। मुझे किन्तु बहुत कष्ट करना पड़ा था।" और कह रहे हैं: "तुम अपने जन हो, आत्मीय। ... जो जो आत्मीय हैं, कोई अंश हैं, कोई कला हैं।" (पृष्ठ ८२)

उसके अगले दिन (कथामृत २-११-३, पृष्ठ ८५) कह रहे हैं : "अच्छा, ये जो तुम इतना आते हो, इसके मायने क्या ?" मणि अवाक्। ठाकुर निज ही प्रश्न का उत्तर देते हैं।

"श्री रामकृष्ण (मणि के प्रति) – अन्तरंग ना हो तो क्या आते ? अन्तरंग माने आत्मीय, अपना आदमी – जैसे बाप, बेटा.।"

चतुर्थ भाग, पृष्ठ २८३ (४-३१-२, २३ दिसम्बर १८८५) – एक कमरा भर लोगों के सामने दक्षिणेश्वर में श्री रामकृष्ण कह रहे हैं :

'कैसी बात है – भक्त जो यहाँ आएँगे, आने से पहले ही दिखाई देते। वटतला से लेकर बकुलतला तक चैतन्यदेव के संकीर्तन का दल देखा। उसमें बलराम को देखा – ना होने से ये सब मिश्री खा पाते क्या ? और इसको (अर्थात् मास्टर को) देखा।"

अच्छा, एक प्रश्न है। यही जो चैतन्य अवतार में जो लोग पार्षद थे, वे रामकृष्ण अवतार में पार्षद थे, तो क्या बलराम और महेन्द्र ईश्वर के नित्य पार्षद हैं ?

कथामृत तृतीय भाग, पृष्ठ १४५ (३-१४-३, १२ अप्रैल १८८५) पर है बलराम मन्दिर में गिरीश प्रभृति भक्तों के संग में आसीन रामकृष्ण कह रहे हैं : "अहंकार क्या जाता है ? दो-एक जन में दिखाई नहीं देता । बलराम में अहंकार नहीं है । और इसका (श्री म का) नहीं है! औरों (पढ़े लिखों) का कितना ढेर, तमो होता है – विद्या का अहंकार होता है ।"

वस्तुतः संन्यास लेने से ही जो इस अहंकार के हाथ से परित्राण पाया जाता है, ऐसा नहीं है। और कुछ न हो तो, गेरुए का ही सर्वनाशी अहंकार होता है। और श्री रामकृष्ण कह रहे हैं, श्री म का अहंकार था नहीं। था नहीं माने क्या, जरा सोचो, दक्षिणेश्वर जाने पर श्री म श्री रामकृष्ण के सामने कहाँ बैठते हैं.? पायदान पर। बैठने का ढंग वीरासन। सारा जीवन उसी भाव में ही बैठे रहे, जैसे श्री रामकृष्ण को सामने देख रहे हैं, अन्यभाव में बैठने का उपाय नहीं।

कथामृत के तीसरे भाग ११९ (३-१२-२, ७ मार्च १८८५) पृष्ठ पर श्री रामकृष्ण श्री म को कह रहे हैं – भागवत पण्डित को एक पाश देकर ईश्वर रख देते हैं – वह ना होने से 'भागवत कौन सुनाएगा?' – रख देते हैं लोक शिक्षा के लिए । माँ ने उसी लिए संसार में रखा है ।" तब श्री म के संन्यास के लिए अधिक आग्रह करने पर श्री रामकृष्ण ने एक दिन धमक दे कर कहा : "कोई मन में न सोचे कि माँ का काज अटका रहेगा। माँ इच्छा करने से तिनके से बड़े-बड़े आचार्य बना लेती हैं।"

इसके बाद उन्होंने (श्री म ने) संन्यास की प्रार्थना नहीं की। गुरु के आदेश से गुरु के कार्य को करने के लिए संसार के अग्नि-कुण्ड में रहकर आजीवन जलना-बुझना अंगीकार किया। 'काव्ये उपेक्षिता' में रवीन्द्रनाथ ने उर्मिला के प्रति अविचार करने के लिए तीव्र अनुयोग किया है आदिकवि का। बोले, लक्ष्मण का त्याग ही तुम्हें बड़ा दिखाई देता है। लक्ष्मण ने राम के लिए अपने आपको ही मात्र उत्सर्ग किया था, किन्तु उर्मिला ने जो अपने से अधिक अपने पति को दिया, वह तुमने देखा नहीं? उर्मिला का त्याग कितना अधिक बड़ा था। मेरी कहने की इच्छा है, श्री रामकृष्ण के त्यागी सन्तानों ने क्या त्याग किया? घृण्य संसारी जीवन और श्री म ने सदा के लिए त्याग दिया स्वर्गीय सुषमामण्डित संन्यास जीवन पर अपना उत्तराधिकार। गुरु के प्रति कितना अधिक प्रेम होने से ऐसा सम्भव है? ऐसा प्रेम था निताई का। बीस बरस के संन्यास-जीवन का त्याग करके श्री चैतन्य के आदेश से संसार में प्रविष्ट हए। क्यों ? क्योंकि, तुम गृह में रहकर

निर्लिप्त संसार जीवन को यापन करने के आदर्श बनो। श्री म भी तभी हुए, model (आदर्श) गृहस्थ संन्यासी — अपने घर में अपने पास उनका ही परिचय था, वे इस घर की दासी हैं। वह भी सिर्फ कहने में नहीं, काज कर्म में, व्यवहार में, दैनन्दिन जीवन-यापन में। घर लौटते वक्त रात हो गई। संग के ब्रह्मचारी जाने लगे उनका आहार दूध-रोटी घर से लाने के लिए। 'ना-ना' निरस्त कर दिया ब्रह्मचारी को। दासी होती तो क्या करती, वह क्या चीख-पुकार कर घर के लोगों को जगा पाती? 'ना।' 'तब मैं उनको विरक्त क्यों करूँ? जाओ, दो पंजाबी रोटी खरीद लाओ।' उसी रोटी के बीच का भाग टुकर-टुकर खा कर सो रहे। ब्रह्मचारी स्तम्भित!

'महेन्द्र मुझे छोड़ कुछ जानता नहीं।' किसने कहा ? सच्चिदानन्द ब्रह्म ने, जो मनुष्य शरीर में अवतीर्ण हुए। आहा, क्या बात! 'वह मुझे छोड़ कुछ जानता नहीं!' श्री म दर्शन १३ भाग पृष्ठ २०० पर इसी रामकृष्णमयता को देखने और सीखने साधु आ रहे हैं श्री म का संग करने। 'चलो भाई आज जगत् भूल आएँ,' बोलते थे अनेक बेलुड़ मठ के साधु श्री म के पास आने से पहले।'

छात्रावस्था से ही श्री म की Hero worship, महात्मा-पूजन की झोंक थी। सेकण्ड क्लास (नवीं कक्षा) में जब पढ़ते थे तब से ही केशव सेन ने उनके मन का हरण कर लिया था। Albert Hall के ऊँचे pillar से चढ़कर वे केशव सेन को देखते। श्री म बोलते:

"एक बार एक कॉलेज reunion (पुनर्मिलन) में बंकिम बाबू को देखने गया। वे जिस जगह जाते, पीछे-पीछे, उसी जगह जाता।

"भाग्य से हमारी यह hero-worship, महात्मा-पूजन थी । इसलिए ठाकुर को जिस दिन देखा, उस दिन से ही पकड़ डाला ।" (श्री म दर्शन, ५-१४-१, पृष्ठ २१०-२११) ।

और पकड़ लेना, क्या ऐसा-वैसा पकड़ लेना? अन्य जो आते थे सकल ही क्या प्रथम दिन से शेष दिन पर्यन्त अनुक्षण पकड़े रख पाए? इनके विश्वास में भी ज्वार-भाटा आया, एकबार खूब विश्वास होता, और फिर ढक जाता अविश्वास मेघ से। आलोक और अन्धकार का घटना-बढ़ना। किन्तु श्री म का विश्वास था जैसे बड़े सरोवर का जल, घटना-बढ़ना नहीं, कल-कल शोर नहीं, शान्त, निश्चल, किन्तु अथाह गम्भीर।

यह तो होना ही नहीं था। बंगदेश की वायु में तब धार्मिक विश्वास को अस्थिर करने वाले जीवाणु मण्डरा रहे थे। श्री म थे हेयर स्कूल और प्रेज़िडेसी कॉलेज के छात्र। छात्र माने क्या – उस युग के कलकत्ता विश्वविद्यालय के द्वितीय, तृतीय आने वाले छात्र। अंग्रेज़ी में जिसे कहते हैं gigantic scholar (प्रकाण्ड विद्वान)।

श्री रामकृष्ण ने महेन्द्र को प्रथम दिन से ही चिन्हित कर लिया था। मनुष्य पहचानते थे वे । वे पहचानेंगे नहीं, वे जो थे मनुष्य गढ़ने वाले भास्कर । उत्तम रत्न देखने से जैसे माणिक की, प्रथम श्रेणी की मिट्टी या पत्थर देखकर मिट्टी या पत्थर के शिल्पी के मन की जैसी अवस्था होती है. अनेकश: वैसी ही हुई थी श्री रामकृष्ण की । अवश्य नरेन्द्र को प्रथम देखते मात्र ही जो हुआ, उसका दूसरा उदाहरण नहीं। नरेन्द्र भी सोच रहे हैं, आदमी पागल तो नहीं ? दूसरा उपाय तो था नहीं । नरेन्द्र थे आकाश के समान बृहत्, हिमालय के समान गम्भीर, समुद्र के समान अतल और उच्छल । केशव में था मात्र एक गुण और नरेन्द्र में अट्ठारह । नरेन्द्र को देखकर तभी श्री रामकृष्ण की वैसी उथल-पृथल । ना, ना, उसकी तुलना आएगी नहीं । नरेन्द्र के संग में और किसी की तुलना वातुलता है, किन्तु श्री म के द्वितीय दर्शन के समय उन्हें विवाहित सुनकर श्री रामकृष्ण की उच्चस्वर में खेदोक्ति का स्मरण करें, सिहर कर रामलाल को पुकार उठे – ओ रे रामलाल ! इसने विवाह कर लिया है । देखा जब, केवल विवाह ही नहीं, बच्चों के बाप भी हो गए हैं, एक ही बार में संसार छोड़कर आना चलेगा नहीं । घर में रख कर ही इनसे अपना कार्य करवाना होगा ।

लग गए तैयारी करने में। मनुष्य गढ़ने वाले भास्कर लग गए प्रकृत मनुष्य को देवमानुष में परिणत करने में। काटना, तराशना शुरु हो गया। लिओनार्दो या रेमबरें (Rembrandt) तैयार प्रस्तर मूर्ति में क्या प्राण सञ्चार कर पाते ? श्रीरामकृष्ण ने किन्तु अपने भास्कर्य में चैतन्य का सञ्चार कर दिया। 'कथामृत' को सावधानी से पढ़ने वाले पाठक के सोत्सुक चक्षुओं में श्री म का यही क्रम-रूपान्तर विस्मय जगाता है।

इस प्रसंग में एक बात उल्लेखनीय है। ईश्वर ही कहें या ब्रह्म ही कहें, ब्रह्म ही कहना बेहतर है. कारण बात वेदान्त की है. वे तो अस्ति – अस्ति. भाति. प्रिय । लाख वर्ष पहले भी वे अस्ति. लाख बरस बाद भी वे अस्ति । अर्थात् वे चिरकाल से वर्तमान । ईशरवृड कहते हैं, रामकृष्ण के संग में रहना माने इसी चिरकाल के वर्तमान की उपस्थिति में रहना । दक्षिणेश्वर में श्री रामकृष्ण के पास कितने लोग ही तो जाते, उनके बीच में कितने बुझते, जानते? किन्तु श्री म जानते थे; जानते थे प्रथम बार से ही। यही बात मुझे विशेष तात्पर्यपूर्ण लगती है। इन्हीं सत्य घटनाओं को दो छोरों से देखा जा सकता है। प्रथम श्री म की ओर से। श्री म के प्रान्त से देखें तो. प्रथम बार से ही वे पकड़ पाए थे कि श्रीरामकृष्ण मनुष्य-शरीर में ईश्वर हैं। इसी से समझा जाता है कि श्रीरामकृष्ण के पास आने से पहले ही उनका आध्यात्यिक व्यक्तित्व कितना दीर्घदेही था, क्योंकि अन्य अनेक के मुकाबले इनका माथा अधिक ऊँचा था । यह हुई एक दिशा । दुसरा (मन में है, द्वितीय दर्शन से ही श्री म का सब तर्क, सब संशय निःशेष मिट गया), यह तो निश्चित है श्री म का विश्वास था स्वतः सिद्ध । अब श्री रामकृष्ण के प्रान्त से देखा जाए ईशरवृड की बात से। 'कौन तुम्हें जान सकता है तुम्हारे स्वयं जनवाए बिना?' 'यमेवैष वृण्ते तेन लभ्यः' इसी श्रुतिवचन के अनुसार श्री रामकृष्ण के स्वयं को स्वयं ही पहचनवाए बिना श्री म का साध्य नहीं था उनको पहचानना । अर्थात श्री म को देखने के संग संग ही उन्होंने श्री म के मन में स्वीय स्वरूप को प्रकाशित कर विश्वास उत्पन्न कर दिया था।

जो हो, असली थे नरेन्द्र और महेन्द्र । ये दो जन प्रारम्भ से ही चिन्हित थे। एकजन 'घर और बाहिर हाँक देगा' अर्थात् देश और विदेश में प्रचार का जयरथ चलाएगा, और एकजन एक जगह पर बैठकर 'भागवत सुनाएगा' अर्थात् उनकी अमृत जीवनलीला यथायथ (accurate) वर्णना करेगा कलम के मुख से एवं स्वीय कण्ठ से। जो रिकॉर्ड रखेगा वह जाने के पहले दिन से ही लिख रख पाएगा, तभी श्री रामकृष्ण ने प्रथम दिन से ही अपने को पहचनवा दिया था उनको। यीशु ने पीटर को देखकर बोला था: 'Upon this rock I will build my church', ( इस पत्थर के ऊपर मैं अपना मन्दिर बनाऊँगा – Mathew 16-18)। इसमें क्या कोई सन्देह है कि, इस युग के यीशु, श्री रामकृष्ण यदि इस भाषा में बात कहते तो कहते

नरेन्द्र और महेन्द्र को देखकर, Upon there two rocks I will build my church! (इन दो चट्टानों पर मैं अपना प्रतिष्ठान निर्मित करूँगा।) रोमाँ रोलाँ कहते हैं गॉस्पेल के सम्बन्ध में 'almost stenographic exactitude'(प्रायः लिपिलेखन के समान ठीक)।

श्री रामकृष्ण यदि एक phenomenon अर्थात् वास्तव में घटी अदृष्टपूर्व एक घटना हैं, तब इसी phenomenon को वास्तविक एक भित्ति प्रदान कर पाती है एकमात्र श्री म की रचित कथामृत। इसी संशय-भरे युग में पश्चिम में जब accuracy (शुद्धता) के प्रमाण को लेकर इतनी बाल की खाल निकाली है, केवल भावसम्पद में समृद्ध कोई ग्रन्थ विचारशील बहिर्विश्व के चक्षुओं में ग्राह्य होगा नहीं। इसीलिए श्रीरामकृष्ण आन्दोलन के पक्ष में श्री म रचित कथामृत की अपरिहार्यता है। क्या ईशरवुड यूँ ही कहते हैं: "श्री म हमारे एवं समस्त भविष्यद् वंशी का जो उपकार कर गए हैं, उसे प्रकाशित करते हुए ऐसा कुछ बोलना सम्भव नहीं है जिससे लगे कि बढ़ा-चढ़ा कर कहा गया है।" (Ramakrishna and His Disciples, पृष्ठ २८२)

श्री रामकृष्ण यदि थे संस्थापक, और स्वामी विवेकानन्द व्यवस्थापक, तो यह बात कही जाए कि श्री म थे संग्राहक ? 'क्या बोलते हैं साले, परमहंस की फौज ?' बोले थे कि ना श्री रामकृष्ण हँस कर ? इसी फौज के recruiting (भर्ती) अफसर थे श्री म । श्री रामकृष्ण की जीवितावस्था से ही श्री म ने यही recruiting (भर्ती) आरम्भ कर दी थी । जिस स्कूल एवं कॉलेज में वे पढ़ाते थे, वहाँ उच्च संस्कारवान् लड़कों को देखते ही दक्षिणेश्वर ले जाते, बाद में ले जाते वराहनगर मठ में, बाद में भेजते बेलुड में । छेलेधरा मास्टर (लड़के पकड़ने वाला मास्टर) नाम हो गया था उनका । यीशु बोले थे पीटर और एन्ड्रयू को, क्या तुम मछली पकड़ रहे हो? पीटर, उसका भाई एन्ड्रयू, ज़ेबेदी के लड़के जेम्स और उसका भाई जॉन, ये हुए थे उनके अन्तरंग शिष्य, सब मछुहारे थे कि ना ! यीशु बोले, मेरे संग आओ, मैं तुम्हें मानुष पकड़ना सिखा दूँगा । (मैथ्यू ४-१९) । श्री रामकृष्ण के मनुष्य पकड़ने वाले एजेण्ट थे श्री म । श्री म कहते, ठाकुर के साधु कितने बड़े व्यक्ति हैं ये, एक उद्देश्य ईश्वर-दर्शन । कितना बड़ा आदर्श सामने ले कर

चल रहे हैं। लड़के पकड़ना माने यही ठाकुर के साधु तैयार करना। और वह क्या दो-एक या चार-छः तैयार किए ? श्री म दर्शन से एक सीन पढ़ता हूँ, सुनिए। (श्री म दर्शन २-५-३, पृष्ठ ४४)।

श्री म के हाथ में है एक पत्र। पत्र को माथे से छुवाते हैं। एक जन साधु ने लिखा है हरिद्वार से।

"श्री म (भक्तों के प्रति) – देखिए, महात्माओं का यही प्रसाद। प्रसन्न होकर जो देते हैं, वही प्रसाद। इन्हीं साधु ने ढ़ाई वर्ष पहले संसार त्याग किया—छुप-छुपकर साधुसंग करते थे। पैसा नहीं, बालक, पैदल-पैदल यहाँ, मठ, उद्घोधन, इन्हीं सब स्थानों पर यातायात करते थे। पाँच मील से ऊपर होगा यहाँ से घर। तीन जन आते थे, दो जन साधु हो गए।... सब भोग-वासना छोड़ दी है – केवल ईश्वर को चाहते हैं, 'इसी जीवन में जैसे उनको पाऊँ। और ठीक-ठीक साधु-जीवन यापन कर पाऊँ।' किस प्रकार देखता – दोपहर की गर्मी में पाँव से पैदल चलकर पसीना-पसीना हो आकर उपस्थित – हाथ में माँ काली के प्रसादी फूल। ऐसे ना हों तो क्या इतने serious होते हैं। 'न हि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति।' – इनका क्या ईश्वर कल्याण करे बिना रह पाएँगें?"

देखिए, क्या सुन्दर चित्र ! हम जैसे आँखों के सामने देख पा रहे हैं ! और श्री म की सफलता का नमूना देखिए, तीन तरुणों पर जाल क्षेपण किया, पकड़े गए दो जन । दो जन उनमें से साधु हो गए । यह हुआ उनके साक्षात् संस्पर्श में जो आए, उनमें से साधु संग्रह का हार । उनके द्वारा रचित महाभागगवत कथामृत के ज्वलन्त उद्दीपन की बात का हिसाब करने से यह संख्या और अनेक वृद्धि पा जाती है । श्रीमत् स्वामी विज्ञानानन्द ने १९२४ ईस्वी ८ दिसम्बर को श्री श्री माँ के जन्मदिन पर बेलुड़ मठ में श्री म को कहा "मास्टर महाशय, ठाकुर भी एक, एवं कथामृत लिखने वाला व्यक्ति भी एक । जितनी बार पढ़ता हूँ, उतनी बार नूतन बोध होती है । आहा, क्या अपूर्व ग्रन्थ की रचना की है । पता करने से पता चला, मठ के चौदह आना लोग साधु हुए कथामृत पढ़कर और आपके संग मिलकर ।" (श्री म दर्शन, १२ भाग, भृमिका, पृष्ठ ६)।

क्या करने से यह सम्भव हुआ ? श्री रामकृष्ण के अप्रकट होने के बाद भी अर्ध शताब्दी से अधिक श्री म का साधु-संग्रह के कार्य में अनलस भाव से निमग्न रहना ? अवश्य ही उनकी कृपा से यह हुआ । जैसे यीशु की कृपा से पीटर और एन्ड्रयू के जाल में इतनी मछलियाँ पकड़ी गईं कि जाल ही टूट गया।

ईश्वर की शक्ति से ही अमर ग्रन्थ रचना सम्भव है। अन्यथा असम्भव। यही ईश्वर की शक्ति वा कृपा का व्यापार हमारे सामने विशेष गुरुत्वपूर्ण है, ऐसा मेरा विचार है। देखिए ना, कितने ही तो जनों ने लिखी है श्री चैतन्य की लीला-कथा। उनमें से वृन्दावन दास द्वारा लिखित चैतन्य भागवत और कृष्णदास कविराज लिखित चैतन्य चिरतामृत का समादर सर्वाधिक है। चैतन्य की बाल्य लीला जानने के लिए वृन्दावन दास की भागवत के पास जाना होगा, जैसे यीशु की बाल्यलीला या story of nativity जानने के लिए ल्यूक-कथित गॉस्पल के पास जाना होगा। वृन्दावन दास ने शैशव में चैतन्य देव के दर्शन किए थे एवं उनकी कृपालाभ की थी, तभी बोले, उनका सर्वशेष भृत्य है वृन्दावन दास। इस प्रकार की कथा है कि महाप्रभु ने उनमें शक्ति का संचार किया था।

कृष्णदास किवराज ने चैतन्यदेव के दर्शन नहीं किए, नित्यानन्द प्रभु का स्वप्न में दर्शन पाकर उनके आदेश से व्रजवास कर रहे हैं। वहाँ पर सनातन और रूप गोस्वामी के अनुग्रह और रघुनाथ दास गोस्वामी की परिचर्या भार को ग्रहण करने का सौभाग्य लाभ प्राप्त कर रहे हैं। ये स्वयं ही लिख गए हैं कि इन्होंने चैतन्य की कृपाशक्ति लाभ की थी। 'यद्यपि आमार गुरु चैतन्येर दास, तथापि जानिबे आमि ताँहार प्रकाश (यद्यपि मेरा गुरु चैतन्य का दास है, तथापि जानो मैं उनका प्रकाश)।' यह काज ही सब से गुरुत्वपूर्ण था, जो जगन्माता से श्री म के लिए शक्ति प्रार्थना की थी। जगन्माता ने भी शक्ति दी - एक कला, सोलह कला में से। तभी बोले, 'ओ समझा, इससे ही तुम्हारा काज होगा ?' (कथामृत, ५-७-५, पृष्ठ ६३, १८ अगस्त १८८३)

और हुआ क्या, जो-सो हुआ? श्री रामकृष्ण जैसे अनन्तमुखी, उनका जीवन वेद 'कथामृत' भी उसी प्रकार असंख्यमुखी । तुम्हारा कोई भी मत हो, जो पथ ही हो, कथामृत तुम्हें उसी मत से, उसी पथ से रास्ता दिखाकर आगे ले जाएगी । क्या एक बात नहीं है, चेतनसमूह का भी चेतियता? 'ज्योतिषां ज्योतिः' है गीता में और मुण्डक में भी । 'नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानाम्' है कठ एवं श्वेताश्वर में । कथामृत भी जैसे उसी सकल धर्मग्रन्थ समूह का धर्मग्रन्थ है, अन्य सब ग्रन्थ समझने में सहायक है यही कथामृत । श्री म कहते, बाइबिल के प्रसंग में, 'हम क्राइस्ट के संग में रहे हैं कि ना, ठाकुर को देखा है, तभी हम कुछ समझ पाते हैं क्राइस्ट की बात।'

बाइबिल की बात जब उठी है तो बाइबिल से प्रासंगिक बोध से उद्धृत करता हूँ: 'For thou shalt be his witness unto all men of what thou hast seen and heard' (उनकी वाणी तुम सभी मनुष्यों को पहुँचाओगे, यही जो तुमने देखा और सुना है)।

श्री म को भी बोली जा सकती है यही बात । 'Thou shalt be our Lord's witness unto all men of what thou hast seen and heard.'

वस्तुतः श्री म ने वही किया है, अपनी आँख से जो देखा, अपने कानों से जो सुना, उसे उसी दिन ही लिख रखा। कौन, कहाँ, किस समय, कौन-कौन उपस्थित, घटनास्थल, किसकी क्या क्रिया – सब लिपिबद्ध किया कथामृत में। फलतः कथामृत होकर रह रही है श्री रामकृष्ण के अवतारत्व की एक प्रामाण्य दलील, अकाट्य साक्षी। किन्तु केवल क्या श्री रामकृष्ण की ? कथामृत जो एक ही कारण से स्वामी विवेकानन्द की भी एकान्त विस्मययोग्य authentication (परिपृष्टि की) रिपोर्ट है। विवेकानन्द – नरेन को authenticate (प्रमाणीभूत) करेगा कौन ? वह क्षमता है किसकी ?

श्री रामकृष्ण को छोड़ इह लोक में द्वितीय कोई नहीं, हुआ नहीं। जो जानते हैं – नरेन्द्र आया क्यों, कितने बड़े वे हैं। पाँच खण्ड की कथामृत में प्रायः ४९ सीन में इस नरेन को देखा जाता है। और सब जगह श्रीरामकृष्ण स्वयं अपनों के निकट नरेन की महिमा की वर्णना कर रहे हैं। अशेष प्यार से और आनन्द गौरव से वही सब दिव्य वाक्य लिपिबद्ध कर रहे हैं श्री म। और नहीं तो अविस्मरणीय परिच्छेद में असीम प्रेम से और श्रद्धा से श्री म

चित्रित कर रहे हैं। बराहनगर मठ में नरेन के नेतृत्व में भ्रातृसंघ का जन्मविवरण। आँखों के सामने जीवन्त करके रख दिया है भाइयों के ज्वलन्त वैराग्य और प्रचण्ड कठोर साधना को चित्रित किया है श्री म की चिराचरित सत्यिनिष्ठा से।

श्री म लिखते हैं, 'मठ में भाई नरेन्द्र के अदर्शन को सहन कर पा नहीं रहे । सभी सोचते हैं, नरेन्द्र कहाँ चला गया।' क्यों ? क्यों इतनी व्याकुलता ? श्रीरामकृष्ण ने जो नरेन्द्र को उनकी समस्त शक्ति, समस्त दैवी प्रेम दान कर दिया था। किस-किस दिशा से नरेन्द्र में ही वे श्रीरामकृष्ण को पाते हैं। नरेन्द्र के इसी अनुपम दैवी रूपान्तर की सत्यनिष्ठ साक्षी है श्री म कथित श्री श्री रामकृष्ण कथामृत ही।

श्री म के – रामकृष्ण अवतार के इन्हीं व्यासदेव के – महाप्रयाण के अगले दिन श्रीमत् स्वामी शिवानन्द, बेलुड़ मठ के द्वितीय प्रेज़िडेण्ट ने कहा था, "ये सब ठाकुर के शरीर हैं। उनके कार्य के लिए आए थे। कार्य खत्म होने पर, उन्होंने दुबारा गोद में उठा लिया। जब तक चन्द्र, सूर्य रहेंगे, तब तक श्री रामकृष्ण का नाम जीवन्त रहेगा। और उनके संग रहेगा कथामृत के लेखक श्री म का नाम।" (श्री म दर्शन – १५ भाग, परिशिष्ट-१-४, पृष्ठ ४१७)

(९ अप्रैल, १९८२, उद्बोधन कार्यालय भवन में 'सारदानन्द हॉल' में अनुष्ठित रामकृष्ण-विवेकानन्द साहित्य सम्मेलन में पठित प्रबन्ध।)

# मास्टर महाशय के सदुपदेश

संकलन : डॉ० नौबतराम भारद्वाज

महापुरुषों, महानात्माओं के मुखिनिःसृत वाक्य साधकों, उपासकों और शाश्वत धर्म के अनुगामियों के लिए सदा ही प्रेरणास्रोत हुआ करते हैं; वे भक्तों के हृदयों में निरन्तर अदम्य उत्साह भरते रहते हैं और उन्हें मोक्षमार्ग पर, शान्तिपथ पर, आनन्द की राह पर निरन्तर अग्रसर होते रहने के लिए धकेलते रहते हैं। अतः आचार्य श्री म की वाणी के कुछ अंश संकलित करके 'नूपुर' में देने का विचार आया। श्री रामकृष्ण भक्त-परिवार में 'मास्टर महाशय' के रूप में विख्यात कथामृतकार श्री महेन्द्र नाथ गुप्त ही हैं आचार्य श्री म। श्री म दर्शन में लिपिबद्ध उनके इन कुछेक कथनों का संकलन मात्र है प्रस्तुत लेख:

तरंग न हो तो सशक्त नाविक नहीं बनता – everyone is a pilot in a calm sea. इसलिए है विपदाओं की प्रयोजनीयता । विपद्-आपद् के भीतर से ही सत्य का पथ है । देखिए, संसार में जो लोग बड़े हुए हैं उनको कितनी विपदाओं में से जाना पड़ा है । बाधाहीन अलस जीवन दुर्बलता का अड्डा है । ईश्वर जिन्हें बड़ा बनाते हैं उन्हें विपद् में डालते हैं । मकरध्वज तैयार होगा तो आग में जलकर और अग्निवृष्टि के भीतर से ही । तरंग शक्ति की वृद्धि करती है । गुरु वा गुरुस्थानीय व्यक्तियों के जीवन की घटनाओं को पुंखानुपुंख रूप से देखना और चिन्तन करना चाहिए । कितनी विपदाओं के भीतर से जाकर ही तब वे इतने बड़े हुए!

-14.03.1923

लॉ पढ़ना तो अच्छा है किन्तु अर्थ के लिए सत्य को मिथ्या करना उचित नहीं ।...ईश्वर ने ही इस संसार में वकील, पुलिस, जज, अदालत सब बनाए हैं। लॉ भी in relation to God - भगवत् उद्देश्य से पढ़ने से उनकी लीला का बोध हो जाता है। —14.03.1923

प्रकृति में जो होता है वह करना ही पड़ता है। अर्जुन को श्रीकृष्ण ने यही बात कही थी: क्षत्रिय कर्म तुमसे होगा ही, मैं कहूँ अथवा न कहूँ—प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यित। (गीताः 18/59) इसलिए उसका पथ और कौशल बतलाता हूँ। निष्काम होकर जो करना हो सो करो नामयश के लिए नहीं, राज्यप्राप्ति की आशा से नहीं; केवल भगवानप्राप्ति के लिए। करवाता है तो करता हूँ—यह कहना जहाँ नहीं कर सकता, और जहाँ कर सकता है वहाँ अपना अहंकार प्रकट करना, इससे चलेगा नहीं। कर सकना या न कर सकना सब ही वे करवाते हैं। उन पर भार दे देने से वे ही सब देखते हैं।

-14.03.1923

किसी भी विषय को जानने के लिए आन्तरिक प्रार्थना करने पर ठाकुर उसे ज्ञात करवा देते हैं। कोई-कोई कहता है कि वे सामने आकर भी कह देते हैं; यह करो, वह करो। फिर मन में भी बता देते हैं। शुद्ध चित्त में वे उदय होते हैं, विचार रूप में। मन फिर शुद्ध होता है साधुसंग से, नित्य नियमित साधुसंग से।

—14.03.1923

वैदिक आचार की बड़ी आवश्यकता है। वैदिक आचार को ही सदाचार कहते हैं, ऋषियों का आचार। धर्मजीवन यापन करते समय इसकी बड़ी आवश्यकता है। खाना पकाना जो कुछ भी किया जाए सब भगवान के लिए है, इस भाव से करना चाहिए। उनको भोग निवेदन करके सब ही प्रसाद पाएँ। इससे सत्त्वगुण की वृद्धि होती है। नहीं तो कितना ही खा लो, तुष्टि नहीं होती। पशु भी खाते ही हैं। मनुष्यों का फिर उनसे कहाँ अन्तर रहा? आहार द्वारा शरीर की वृद्धि होती है किन्तु भगवान को निवेदन करके प्रसाद पाने से शरीर की वृद्धि भी होती है और साथ ही मन भी ईश्वरमुखी हो जाता है। जानवर सदाचार नहीं जानते, मनुष्य जानते हुए भी यदि आचरण नहीं करते तो वे भी जानवरों की तरह ही हो जाते हैं। इसीलिए सदाचार बहुत ही आवश्यक हो गया है।

-15.03.1923

ठाकुर अपने जीवन में मनुष्य-जीवन की सारी समस्याओं का समाधान कर गए हैं। साधारण आहार-विहार होना ही यथेष्ट है। अल्प दालभात खाओ और शेष समय राम-राम करो। कहते थे ना, 'ब्राह्मणी विधवा मेरा आदर्श है। एक कुटिया में रहना और साग सब्जी लगाना। यही साग सब्जी और भात खाना तथा सर्वदा ईश्वर का नाम लेना।' स्वामी जी को तभी कहा था, 'दालभात हो जाए तो बहुत है, इससे अधिक नहीं'।

-16.03.1923

सारा जीवन धर्मजीवन; सर्वकार्ये धर्माचरण । अल्प धर्माचरण, फिर विपरीत आचरण; इससे काम होता नहीं । आहार, विहार, शयन, स्वप्न, जप, ध्यान, पूजा, पाठ सर्वावस्था में मन का एक ही भाव रहे, एक उद्देश्य – ईश्वरलाभ।

-16.03.1923

इस देश का भाव ही है, जो कुछ उत्तम सब ईश्वर में समर्पण। यह भाव, उपासना का भाव अन्य देशों में होना बहुत ही कठिन है । विशेषतः वर्तमान समय में, पश्चिम में तो इसका बड़ा ही अभाव है। उन्होंने तो केवल आहार-विहार आदि को ही सार किया है । उनमें भले लोग भी हैं किन्तु वे उस देश में स्थान नहीं पाते । उनका जातीय भाव ही है, इहकालसर्वस्व । उन सब देशों के भले-भले लोग इस देश की ओर ताक रहे हैं । सात समुद्र तेरह नदी पार करके यहाँ आते हैं. ईश्वरीय भाव सम्भोग करने के लिए । इसी बेलुड़ मठ में ही कितने साहब-मेम आ रहे हैं । कितने ही पवित्र त्यागमय जीवन यापन कर रहे हैं। कोई-कोई तो फिर साध भी हो गए हैं। वे सब महान पुरुष हैं। किन्तु उनके देश में उनके लिए स्थान नहीं । कोई उन्हें समझ ही नहीं सकता । आहा ! कितनी विघ्न बाधाएँ अतिक्रमण करके वे यहाँ इस देश में आते हैं ईश्वरानन्द उपभोग करने के लिए । किन्तु यहाँ के लोग तो इस भाव को हवा बातास में, breath में अनुभव कर रहे हैं। हमारे लिए यह भाव अति natural, स्वाभाविक है। यही है भारत का वैशिष्ट्य । यही है हिन्दु-सभ्यता, आर्य-सभ्यता का आदर्श। आगे ईश्वर, परे सब। ईश्वरलाभ न हुआ तो कुछ भी नहीं हुआ। रूप, गुण, धन, जन, यौवन सब ईश्वर के समर्पण में ही सार्थकता है, नहीं तो वृथा बोझ ढोना है। गर्भाधान से आरम्भ करके, मृत्युपर्यन्त समस्त जीवन ही है एक अटूट उपासना।

-16.03.1923

ठाकुर सन्ध्या करने के लिए कहा करते थे। उससे नित्य प्राणी-हिंसा आदि जितत हुए पाप का प्रायश्चित हो जाता है और ईश्वर का उद्दीपन होता है। और फिर नित्यप्रति के कार्य का भला, बुरा सब पकड़ा जाता है उस समय बैठने से। सन्ध्या अर्थात् संधिक्षण में; रात के बाद दिन आने पर, दिन के बाद रात आने पर और मध्याहन में भगवान का नाम लेना चाहिए।

-17.03.1923

तो भी दो वेला अन्ततः ध्यानघर में बैठना होगा, वह चाहिए ही। अभ्यास रखना चाहिए। अर्जुन को श्रीकृष्ण ने यही बात कही थी, 'अभ्यास के द्वारा मन को वश में किया जाता है।' ठाकुर की एक छिव रखे, दो वेला धूप और सन्ध्या के समय प्रदीप दिखाए और नित्य वहाँ बैठे। ईश्वर छोड़ और कोई बात न करे वहाँ पर। ऐसा करने पर अन्य लोग भी इससे बदल जाएँगे।

-17.03.1923

अवतार जब आते हैं, उस समय लोगों की व्याकुलता बढ़ जाती है। ईश्वर को जानने की इच्छा प्रबल हो जाती है। देश में एक प्रकार का नूतन भाव जाग्रत हो जाता है। Higher life का ideal, आध्यात्मिक जीवन का आदर्श वहाँ दृष्टिगोचर होता है। अन्य समय तो लोग बाह्य पूजा-पारण में ही रत रहते हैं, केवल नियममात्र ही बन जाता है। सुखभोग, नामयश इन सब के लिए ही पूजादि करते हैं। ईश्वरलाभ-जन्य आन्तरिकता प्रायः उनमें दिखाई देती नहीं। व्रत, पूजादि द्वारा भगवान को सन्तुष्ट करके रोग-दारिद्रय आदि से छुटकारा पाने की चेष्टा करते हैं। किन्तु अवतार आकर दिखा देते हैं कि यह सब तो कुछ भी नहीं है। कामिनी-काञ्चन छोड़, ईश्वरलाभ करना चाहिए। यही मनुष्य का birth-right, जन्मगत अधिकार है। और बताते हैं, यह देह तो रहेगी नहीं, तब इसके सुख को लेकर इतने

व्यस्त क्यों ? जो सुख चिरकाल तक रहेगा, उसी सुख का सन्धान करो। Eternal life का, अमृतत्व का सन्धान बता देते हैं। और विश्वासी भक्तगण तो सन्धान के लिए छूट पड़ते हैं।

-17.03.1923

साधु का प्रचलित अर्थ ही हो गया है, रोग हटाने वाला या चमत्कार दिखाने वाला । किन्तु ठाकुर ने आकर यह सब उलट दिया । उन्होंने कहा, ये सब पार्थिव वस्तुएँ हैं, रहेंगी नहीं ।

-17.03.1923

ठाकुर कहा करते थे, शत्रुभाव से साधन करने पर तीन जन्म में हो जाता है । उसके माने, सर्वदा उनकी चिन्ता होती रहती है ना, इसीलिए शीघ्र हो जाता है; जैसे कंस, शिशुपाल ।

-18.03.1923

चित्त के अशुद्ध भाव – मैं मनुष्य, ब्राह्मण इत्यादि के साथ संघर्ष होता है चित्त के शुद्ध भाव का, जैसे मैं ईश्वर का दास, उनकी सन्तान अथवा सोऽहम् इत्यादि । इसी शुद्ध भाव द्वारा अशुद्ध भाव निवारित हो जाता है, तब वस्तुलाभ होता है, ईश्वर-दर्शन होता है।

-19.03.1923

सत्य का आश्रय करके रहे, तभी भगवान का दर्शन होता है। 'सत्यमेव जयते नानृतम्', यह वेद की वाणी है। ठाकुर की सारी वाणी है सत्य। ठाकुर जो कह गए हैं, उसका पालन करना चाहिए। अन्ततः चेष्टा करनी ही चाहिए। कुछ भी किया नहीं, गुरु सब कुछ कर देंगे, ईश्वर सब करेंगे, यह कहना है कैसी बात ? प्रथम चेष्टा करे, फिर ही कही जा सकती है, यह बात।

-19.03.1923

साधारण मनुष्य प्रेय की ओर ही जाता है, श्रेय को बहुत कम लोग चाहते हैं। मन तो चाहता है प्रेय। रोख करके श्रेय की ओर ले जाना चाहिए। पचहत्तर रुपए के बैल की तरह हठ करना चाहिए। ना, जाऊँगा नहीं तुम्हारे संग में । संसारी लोग प्रेय से ही आबद्ध होकर रहते हैं । प्रेय माने क्षणिक इन्द्रिय-सुख । श्रेय नित्य चिरस्थायी सुख । गुरु कृपा बिना श्रेय के पथ पर जा सकता नहीं ।

जो श्रेय को चाहते हैं, वे संसार के दुःख-कष्ट, भोगविलास, आहार-विहार की परवाह नहीं करते। चाहते हैं केवल भगवान को। मनुष्य-जीवन का उद्देश्य भी केवल यही है। स्वामी जी तीन दिन के उपवास से म्रियमाण; मूर्छित हो गए। वर्षा के जल से ज्ञान लौट आया तो चलने लगे। किन्तु कैसे वीर! कुछ भी ग्राह्य नहीं, केवल श्रेय।

-19.03.1923

सुशिक्षा पाकर, गुरुकृपा से मोड़ फिर जाने पर, पक्का खिलाड़ी हो सकने पर, तब संसार किया जाए। अर्थ का भी उपार्जन किया जाए, यदि विद्या के संसारजन्य हो। देवसेवा, साधुसेवा, भक्तसेवा, दरिद्रनारायण सेवा, ये सब किया जाए। यही बात ठाकुर ने कही थी एकजन भक्त को।

सुख-दुःख दोनों ही छोड़ दिए जाएँ, तभी त्याग होता है। संसार का दुःख-कष्ट देखकर छोड़ने से त्याग होता नहीं। सुख-दुःख से पार होना चाहिए, उसका ही नाम है त्याग। दुःखमय संसार न कहकर सुख-दुःखमय संसार कहना more logical and more consistent, अधिक तर्कसंगत और युक्तियुक्त है। इसी सुख-दुख से पार होने के लिए बुद्धदेव ने राजपुत्र होते हुए भी संसार छोड़ दिया था।

-20.03.1923

सुख—नाम, यश, धन, स्त्री, पुत्रादि ये सब । दुःख—जरा, मृत्यु, रोग, शोकादि ये सब । इन दोनों के ही पार जाने पर तब ईश्वर-लाभ होगा 'नेति, नेति' करके । अत्यन्त कठिन । कर्मफल-त्याग नहीं हुआ, तो त्याग ही नहीं हुआ, जानो । सुख-दुःख है कर्मफल । -20.03.1923

प्रकृति बदलती है सत्संग और प्रार्थना से । क्षुद्र आधार हैं जो, वे सत्संग सहन कर सकते नहीं । यही जो मठ में जाते हैं भक्त लोग, उनके कितने ही जन्मों की तपस्या थी। जभी तो साधुसंग हो रहा है और उन्हें अच्छा लग रहा है।

-21.03.1923

स्वरूपतः मनुष्य है वही—नारायण, ब्रह्म । किन्तु प्रकाश का तारतम्य है कि नहीं ? वह रहेगा ही । सूर्य का प्रकाश जल पर, दर्पण पर, मिट्टी पर, वृक्षों पर, विभिन्न स्थानों पर, विभिन्न रूप धारण करता है, कमवेशी होता है । स्वरूपतः एक ब्रह्म होने पर भी, शक्ति प्रकाश के तारतम्य से जगत् में छोटा-बड़ा है । यह सब हो रहा है । यह मानना ही पड़ेगा । अन्यथा जगत् रहेगा नहीं । वैचित्र्य ही है जगत् का वैशिष्ट्य । यह कुत्ते की पूँछ है, सीधी की जाती नहीं । सर्वभूतों में ब्रह्म करने पर क्रमशः चित्तशुद्धि हो जाती है । तत्पश्चात् ब्रह्मदर्शन के बाद तब देखा जाता है कि वे ही सब कुछ होकर रह रहे हैं । किसी की निन्दा करने का अवसर नहीं । फिर भी व्यवहार में तारतम्य होता है और रहेगा ही ।

-23.03.1923

जिसकी वर्त्तमान जन्म में ईश्वर की ओर मितगित है और हैं व्याकुल, उनका समझना होगा बहुत जन्मों से यही चेष्टा कर रहे हैं। यही जो किसी को हो सकता है, चैतन्य हो गया अल्प से ही, इसके माने क्या हैं? उसका पहले का किया हुआ है। इस प्रकार मन में दृढ़ संकल्प करना चाहिए— नहीं, मैं और कुछ भी चाहता नहीं, केवल भगवान को ही चाहता हूँ। अन्य पथ जानता नहीं, अन्य कुछ भी जानता नहीं, केवल भगवान को ही जानता हूँ, चातक की न्याईं।

-24.03.1923

केवल वक्तृता देने से क्या होगा ? जैसे इत्र शीशी में होता है, इससे कोई सुगन्ध मिलती नहीं । रुई में लेना होगा, नाक के निकट धरना होगा, तब सुगन्ध मिलेगी । केवल नीति के सम्बन्ध में कहने से क्या होगा ? वह दर्शन तो हो सकता है, धर्म नहीं । तर्क-वितर्क बन्द होने पर धर्मजीवन आरम्भ होता है । तत्त्वोपदेश अभ्यास में परिणत करने का नाम ही है धर्म ।

-24.03.1923

सर्वदा साधुसंग । साधुसंग से अनेक रक्षा । यह करके बहुत सी विपदाएँ कट जाती हैं । भक्तों को इसीलिए नित्य मठ में जाना उचित । न जाने से पछताना पड़ेगा पीछे । जब शरीर में शक्ति होती है, जोर करके करना चाहिए साधुसंग । बहुतों को चैतन्य होता है पीछे, किन्तु तब और समय नहीं रहता । इच्छा हो तो भी कर सकता नहीं । शरीर दुर्बल पड़ जाता है; मन अवसन्न हो जाता है । इसीलिए शक्ति रहते ही कर लेना चाहिए।

-25.03.1923

पुरुषार्थ के बिना कृपा की सम्यक् उपलब्धि नहीं होती। इसलिए कृपा समझने के लिए पुरुषार्थ का वैसा ही प्रयोजन है, जैसा क्षुधार्थ होने पर ही अन्न की प्रयोजनीयता कितनी बड़ी है, समझ में आ जाता है। पुरुषार्थ भी उनका दान। 'पौरुषं नृषु', वे हैं स्वयं ही मनुष्य में पौरुष रूप में। फिर कृपा भी वे ही। पुरुषार्थ और कृपा पृथक्-पृथक् वस्तुएँ नहीं, एक ही वस्तु। अवस्था-भेद से दो प्रकार की दिखलाई देती हैं।

चेष्टा और उद्यम के बिना जगत् चलता नहीं। गीता में जभी तो कहा, 'उत्सीदेयुरिमे लोकाः (गीताः 3/24)।' कहते हैं, यह संसार विनष्ट हो जाएगा यदि मैं काम न करूँ, चेष्टा न दिखाऊँ। मैं न करूँ तो कोई भी करेगा नहीं। इसीलिए वे स्वयं पुरुषार्थ दिखाते हैं अवतार होकर, और फिर कितने ही लोगों द्वारा यह सब करवा लेते हैं, अन्य सब लोगों की शिक्षा के लिए।

इसीलिए पुरुषार्थ का स्थान धर्मजीवन में है अति उच्च। यह चाहिए ही, इसके बिना धर्म जीवन गठित ही नहीं हो सकता। एक जन 'सोऽहम्' भाव में साधना करता है, पद-पद पर उसे विपरीत भाव के संग जूझना पड़ता है। अर्थात् मैं मनुष्य, दुर्बल इत्यादि depressing, निम्नकारीभावों के साथ। इनके साथ दिन-रात लड़ाई करनी पड़ती है। मैं आत्मा, मैं ब्रह्म, यह भाव लेकर ही तब पक्का होता है। अभ्यास चाहिए, उद्यम के बिना अभ्यास होता नहीं। इसलिए इसका अति प्रयोजन। एकजन भक्त रोता है, बिलखता है, प्रार्थना आदि सब कुछ करता है, इसमें क्या उद्यम नहीं? प्रभो, मैं दुर्बल, शक्ति दो, यह कहकर। ये सब क्या? ये सब ही तो पुरुषार्थ। बैठे-बैठे कुपा, कुपा करने से कुपा होती नहीं। कुपा-लाभ के लिए

अवस्था का प्रयोजन । अपने उद्यम, चेष्टा से जब बन पड़ता नहीं, ये कम पड़ जाते हैं, तब ही उनकी कृपा होती है । तब ही प्रार्थना भी ठीक होती है ।

-25.03.1923

वासस्थान, घर-मकान, सब परिष्कृत-स्वच्छ, सजा-संवरा रखना चाहिए । सर्वत्र ही उनकी पूजा । विलासिता नहीं, विलासिता और परिष्कार-परिच्छन्नता, सजाना-संवारना हैं भिन्न । सर्वविषयों में सुदक्ष रहकर, तब फिर सर्वस्व अर्पण करे ईश्वरार्थे । Idiot (मस्तिष्कहीन) से धर्म होता नहीं—वैसे ही careless, अमनोयोगी से भी होता नहीं।

-26.03.1923

सत्यपालन, ब्रह्मचर्य और तपस्या; ये करते-करते चित्त शुद्ध हो जाता है। शुद्ध चित्त में वे स्वयं प्रकाशित होते हैं। अशुद्ध भाव—जीव भाव दूर हो जाता है। तब वे विराजते हैं। जब तक ईंधन, तब तक अग्नि। ईंधन माने वासना, उससे ही मन मिलन होता है। वासना जाते ही शुद्ध मन। ठाकुर कहा करते थे, 'शुद्ध-मन और शुद्ध-आत्मा एक'।

-27.03.1923

तपस्या न की जाए तो यह तत्त्व समझ में आता नहीं। तपस्या करने पर मन के संशय बहुत से अपने आप ही नष्ट होकर एकाग्रता हो जाती है। शम, दम, तितिक्षा आदि गुण आ जाते हैं। इन्द्रिय-संयम और मन की एकाग्रता होने से ही होता है। चित्तशुद्ध न हो तो होता ही नहीं।

दो श्रेणी के लोग उन्होंने बनाए । एक श्रेणी समाधि चाहती है । समस्त वस्तुओं से मन को उठाकर उनमें ही संलग्न करना चाहती है । जैसे सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार ऋषि और जैसे शुकदेव । दूसरी श्रेणी जो समाधि नहीं चाहती । इसी श्रेणी के लोग हैं अधिक । उन्हें ईश्वरीय बातें अच्छी नहीं लगती । ईश्वरीय बातें होती सुनकर उठकर चले जाते हैं । सहन नहीं कर सकते । एक बार ठाकुर के पास दो जन दक्षिणेश्वर गए । एक बैठकर सुनने लगा और दूसरा उठकर चलते हुए कहने लगा, तुम यहाँ बैठो, मैं नौका में जाकर तब तक बैठता हूँ। उन्हें साधु लोग अच्छे नहीं लगते, सहन ही नहीं कर सकते। विषयों की बातें, भोग की बातें करो, प्राण-पन से योगदान देंगे वहाँ आकर। किन्तु वेद ने कहा, 'अन्याः वाचः विमुञ्चथ' (मुण्डक—2:2:7)—प्रवर्त्तक ईश्वर बिना और कोई बात न करें। अर्थात् प्रवर्त्तकों को ईश्वर के सिवा अन्य कोई बात अच्छी नहीं लगती।

ठाकुर ने आकर एक अलग श्रेणी के साधुओं की सृष्टि की । ईश्वर के सिवा वे और कुछ नहीं चाहते । जैसे चातक के प्यास के कारण चाहे प्राण भी निकल रहे हों, किन्तु स्वाति नक्षत्र की वृष्टि के जल के सिवा दूसरा कोई भी जल वह ग्रहण करता नहीं । जैसे मधुमक्खी फूल के अतिरिक्त किसी भी वस्तु पर बैठती नहीं ।

कलकत्ता के लोगों के लिए है अब बड़ा सुयोग। वे मठ में जाकर उत्तम साधुसंग कर सकते हैं। छड़ी हाथ में घुमाते हुए जाना ठीक नहीं, किन्तु श्रद्धा सहित जाना चाहिए। सवेरे-साँझ जाना चाहिए। Best time, सुसमय पर catch, दर्शन करना चाहिए। जब वे सब कुछ छोड़कर ईश्वर-ध्यान में मग्न हों, उस समय दर्शन करे।

-29.03.1923

दिन-रात अवसर प्राप्त होते ही जप-ध्यान करना अच्छा । इस प्रकार जप-ध्यान करते-करते जैसे मोम अग्नि के उत्ताप से गल जाता है उसी प्रकार काम, क्रोधादि—लोभ, अहंकार, अभिमान प्रभृति क्रमशः लोप हो जाते हैं ।

कितने ही तो दोष होते हैं। जिस रक्त और बीज से इस शरीर का जन्म हुआ है, वे इसमें हैं। फिर कर्म—अतीत कर्मों का बन्धन, यह दोष भी। शिक्षादोष, संगदोष और न जाने कितने दोष, ये सब न गलेंगे तो कैसे होगा ? तपस्या करने से, उनको पुकारने से समस्त दोष चले जाते हैं।

-30.03.1923

श्वेतकेतु को पिता आरुणि ऋषि ने यही बात मधु और नदी के दृष्टान्त से समझाई थी। नाना फूलों के रस के एकत्र होने से मधु बनता है। तब भेद नहीं रहता, यह मीठे फूलों का रस है या तिक्त फूलों का। सागर का जल वाष्प बनता है, उसी से फिर मेघ बनता है.। क्रमशः वृष्टि, बरफ, गंगा, सिन्धु प्रभृति नदियों के रूप में वह जल पुनः सागर में प्रवेश करता है, तब सागर ही बन जाता है। 'मैं गंगा, मैं सिन्धु' यह ज्ञान नहीं रहता, सब सागर।

आवरण नहीं ठहरता, आचरण ठहरता है । तभी विक्षेप, ऐसा दिखलाते हैं मानो साधारण व्यक्ति हों । मुचुकन्द राजा ने पहले ईश्वर-दर्शन किया, पीछे विक्षेप का नाश करने के लिए साधन-भजन किया ।

ठाकुर के लड़कों में से भी किसी-किसी ने पीछे साधन-भजन किया। ठाकुर ने तो उन्हें पहले पूर्ण बना ही दिया था; तब भी उन्होंने बाद में साधन-भजन किया। इससे और फिर लोक-शिक्षा भी हो जाती है।

खाना तो जीवन का उद्देश्य नहीं । उद्देश्य है, कैसे उन्हें प्राप्त किया जाए । खाने का कष्ट, कपड़े का कष्ट तो कोई कष्ट ही नहीं । विद्यासागर महाशय ने कहा था, जब संस्कृत कॉलेज के प्रिंसिपल का काम छोड़ा, 'मैं केवल नमक से भात खाऊँगा, पाँच प्रकार के भोजन की क्या आवश्यकता?' जो बड़े होंगे या महान् बनेंगे, वे इस ओर दृष्टि ही नहीं डालते।

अपने सुख की चेष्टा सब करते हैं। किन्तु अपने को जान लेने पर ही जो परम सुख होता है, उसकी खबर नहीं। तभी तो जगह-जगह दौड़-धूप करता फिरता है। पति, स्त्री, पुत्र, वित्त सब ही निजी सुख-विधान करते हैं, इसी कारण प्रिय। उसी निज का, उसी आत्मा का, उसी अपने आप का, सन्धान करने के लिए याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी को उपदेश दिया।

अवतार जब आते हैं तब बड़ा ही सुयोग । इस समय जिनका जन्म हुआ है वे बड़े ही सौभाग्यवान् । सब कुछ तैयार, केवल आहार ही करना शेष, प्रचुर आयोजन ! परोसा तैयार । केवल ज़रा सा कष्ट करके आहार करना मात्र ।

-01.04.1923

उनको जो जानता नहीं, वेद कहता है; वह 'कृपण' है, अर्थात् हतभाग्य, अल्पज्ञ । सब कुछ होते हुए भी न स्वयं भोग कर सकता है और न दूसरे को ही दे सकता है। उनको जान सकने पर 'ब्राह्मण' हो जाता है— उदार, अभय। नचेत् सर्वदा भय। 'ब्रह्म' अर्थात् वृहत् को जो जानता है, वह ब्राह्मण।

बुद्धदेव कहते थे, 'असोकं विरजं सुद्धं तमहं ब्रमि ब्राह्मणम् अर्थात् जो सर्वदा ब्रह्मानन्द उपभोग करते हैं, वे ही हैं ब्राह्मण ।

-02.04.1923

ब्रह्मज्ञ पुरुष के बाहर के लक्षणों को देखकर पहचानना बड़ा कठिन है—प्रायः पहचाना ही नहीं जाता। तो भी जब यदि स्वयं उस प्रकार का हो जाता है, तब दूसरे को पहचान सकता है। ठाकुर ने एक पूर्ण ज्ञानी को देखा था। बतलाते, देखने में मानो बिल्कुल ही पागल, हाथ में एक आम का छोटा पौधा, कृत्तों के संग जूठी पत्तलों में से खाता चुन-चुन कर। किन्तु जब स्तव करने लगा तो मानो मन्दिर ही फट पड़ा। ऐसा तेज! वे कहते थे, 'जब गन्दी नाली का जल और गंगा का जल एक-सा प्रतीत होता है, तब जानो हुआ'—अर्थात् पूर्ण ज्ञान हुआ।

-03.04.1923

तत् सृष्ट्वा तदेवानुप्राविशत्—इस जीवजगत् को उन्होंने ही बनाया। और फिर इन सब के अन्तर में भी वे ही। आकाशादि सूक्ष्म पञ्चभूतों की सृष्टि हुई प्रथम। तत्पश्चात् हुआ मन, बुद्धि, इन्द्रियादि। तत्पश्चात् यह विचित्र जगत्। इन सब की सृष्टि करके फिर वे ही चला भी रहे हैं भीतर से। वे अनुप्रविष्ट होकर रह रहे हैं। अर्थात् ईश्वर इस जीवजगत् के भीतर सूत्रात्मा अथवा अन्तर्यामी रूप में विराजमान हैं। इस बात को न मानने से—केवल क्रम विकासवाद अर्थात् जगत् के परिचालन-कार्य में ईश्वर का कोई हाथ नहीं, आप ही चलता है, जड़वादियों का यह मत, जगत् की प्रधान-प्रधान समस्याओं का सन्तोषजनक समाधान कर सकता नहीं।

इस जीवजगत् का उत्पत्तिस्थल भी वे ही और गति भी वे ही। सब को ही जाना होगा उनके पास, आगे या परे। जैसे ठाकुर कहा करते थे, 'निमन्त्रण गृह से कोई भूखा नहीं लौटेगा। सब ही खाएँगे किन्तु कोई आगे, कोई परे'।

-04.04.1923

समन्वय की बात सब शास्त्रों में है। किन्तु कालक्रम से लोग ये सब बातें भूल जाते हैं। ठाकुर उन्हें अपने जीवन में दिखाने आए। वे कहा करते, 'पंचांग में लिखा है, बीस आड़ा जल बरसेगा, किन्तु पंचांग को निचोड़ दीजिए, एक बूँद भी नहीं पड़ेगा।' शास्त्र में रहने से ही तो होता नहीं। लोग देखना चाहते हैं जीवन्त। तभी तो भगवान मनुष्य होके आकर यह सब समझाते हैं।

हिन्दू कहते हैं ब्रह्म, मुसलमान अल्लाह । ईसाई कहते हैं फादर, यहूदी कहते हैं जेहोबा । पारसी कहते हैं आहुर मजदा, जीनी कहते हैं Ti (ती) । ग्रीक कहते हैं zeus (ज्यूस), बैबिलोनियन कहते हैं बेलास् । एसीरियाई कहते हैं मेरोडाक । प्राचीन मिश्री (इजिप्शीयन) कहते हैं सामास् । मेनिटो नाम से पुकारते हैं रैड इण्डियन । न जाने कितने ही नाम हैं । केवल एक हिन्दू ही और भी कितने नामों से कहते हैं : राम, कृष्ण, हिर, भगवान, परमात्मा, शिव, विष्णु, शक्ति और न जाने कितने, अन्त नहीं । एक राम, उसके सहस्र नाम ।

ठाकुर उन्हें ही माँ कहते थे । चीन देश के लाउत्से (Lao Tse) ईश्वर को कभी-कभी माँ कहते हैं ।

और फिर ये माँ ही ठाकुर होकर आईं। कैसी आश्चर्य-जनक शक्ति देखी! जिस विषय को लेकर अनेक देशों के अनेक शास्त्र व्यस्त हैं—वे साढ़े तीन हाथ के मनुष्य होकर आए दक्षिणेश्वर में। यह तत्त्व मनुष्य बूझे किस प्रकार, वे न बुझावें तो।

-05.04.1923

एक शव लिए लोग जा रहे थे, इसे देख माता ने लड़के को अंचल से ढक लिया। माँ और पुत्र दोनों को ही जो जाना होगा, यह चिन्ता नहीं। मन में सोचती है: जो मर गया, उसे ही मरना था। हम तो चिरकाल तक बचे रहेंगे। ऐसी उनकी माया। इसीलिए तो महाराज युधिष्ठिर ने कहा था, सबका ऐसा सोचना ही है आश्चर्यजनक।

उनकी कृपा से किसी-किसी को स्मरण रहता है, यह शरीर रहेगा नहीं। इसकी सेवा करने से क्या लाभ ? तब विषय-वैराग्य होता है। भोग में मन नहीं जाता। तब ही विवाह करना नहीं चाहता—कर लिया भी हो तो छोड़कर चला आता है। नित्यवस्तु ईश्वर को चाहता है। अथवा संसार में रहता हुआ भी न रहने वाले के समान ही रहता है । तभी तो ठाकुर ने कहा, 'मनुष्य वही जो जीता ही मरा है' ।

-06.04.1923

ठाकुर की initiation for humanity, विश्वमानव के लिए ही दीक्षा वाणी है। वे कह गए हैं, 'ईश्वर का जो भाव भी जिस किसी को अच्छा लगता है, वह उन्हें उसी भाव में पुकारे—साकार, निराकार—चाहे कोई भी भाव हो।' यहाँ तक भी कह गए, जिन्हें ईश्वर पर विश्वास नहीं, वे यह कह कर प्रार्थना करें—'यदि ईश्वर नाम से, सत्य वस्तु नाम से कोई हो, तो वह मेरे सहायक हो; पथ बतला दे—संशय दूर करे। सुख और शान्ति विधान करे। 'कैसा उदार हृदय, कैसी उदार वाणी! दीक्षा-दीक्षा करते हैं लोग—विश्वास कर लेना ही तो दीक्षा है। ठाकुर जगत्गुरु। जभी तो सबके लिए सब प्रकार की व्यवस्था कर गए। और फिर उनकी prayer for humanity, विश्वमानव के लिए जगन्माता के पास प्रार्थना भी तो है। उन्होंने कहा, 'माँ, जो आन्तरिक यहाँ आएगा, उनकी मनोवाञ्छा पूर्ण करो।'

ठाकुर के इसी आह्वान पर कितने लोग आए हैं, अब भी आ रहे हैं और भविष्यत् में भी आएँगे। उनकी कृपा से कितनों को ही अमृतत्व लाभ हो गया है—अब हो रहा है और भविष्यत् में भी होगा। उनकी कृपा ही है मूल—'यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः'। (कठ० 23)

-07.04.1923

ठाकुर का एक-एक महावाक्य मन्त्र स्वरूप है। जप करने से सिद्ध हो जाय। सन्ध्या के पश्चात् प्रायः ही 'गुरु-गंगा-गीता-गायत्री' इसी मन्त्र की आवृत्ति किया करते। इसका एक सौ बार जप करने से भीतर-बाहर एक हो जाता है।

ठाकुर बोलते, जल नीचे की ओर जाता है, उसका स्वभाव ही वैसा है। किन्तु यह भी बोला था, सूर्य के आकर्षण से जल ऊपर भी जाता है। ईश्वरीय कृपा होने पर दुर्दमनीय प्रकृति भी बदलती है। बाह्य चेतना विलुप्त हो गई, इस प्रकार की अज्ञानावस्था में मृत्यु होने पर क्या फल होता है ? इसी प्रश्न के उत्तर में माँ बोलीं, 'मृत्यु के समय बेहोश होने से दोष नहीं है । यदि बेहोश होने से पहले ईश्वर का नाम स्मरण करता रहे तो वह होने से ही हुआ । उत्तम फल होगा'।

-19.09.1923

—श्री म दर्शन भाग I से



स्वामी विवेकानन्द

घर का नाम : नरेन्द्रनाथ दत्त।

• जन्म : 12 जनवरी, सन् 1863 ईसवी।

स्थान : सिमला मुहल्ला, कोलकता।

माता-पिता : श्रीमती भुवनेश्वरी देवी और विश्वनाथ दत्त।

शिक्षा : बी.ए. दर्शनशास्त्र में विशेष रुचि।

गुरु : श्रीरामकृष्ण परमहंस।

बेलूड़ मठ की स्थापना : फरवरी, 1898 ईसवी।

• महासमाधि : 4 जुलाई, 1902 ईसवी।

#### Lectures by

## Swami Dayatmanandaji

former Head, Vedanta Centre, U.K.

#### Occasion:

### Annual Celebrations in Ramakrishna Misson Ashram, Chandigarh, April, 2019

Here are given a few glimpses from his two lectures:

#### I: Swami Vivekananda (5th April)

Why do we celebrate birthdays of great souls?

- 1. To express our gratefulness for the sacrifices they have made for the society.
- 2. To remind ourselves the goal of our lives and what we should do to attain it.

Whenever man loses the purpose of life God comes in the form of a human being. He shows us the path not only through his teachings but he himself lives an exemplary life according to those teachings. This time God has come in the form of Shri Ramakrishna. Whenever God comes he also brings with him several people to whom he propagates the message. And one such person is Swami Vivekananda. He was one of the saptarshis, a maha Rishi.

Whenever there is decline of dharma, and increase of adharma God incarnates. The primary purpose of dharma is to know who we are. There are two ways of thinking:

- 1. Western thinking—Westerner people believe that whenever a need arises help comes in the form of a great person.
- 2. Eastern thinking—They believe that real help can be got only from God. He alone sees and so arranges things for the welfare of mankind.

So according to Hindu way of thinking whenever there is decline of dharma, God incarnates.

Now what is God?

Only in Hindu dharma God is called satchidananda. God is sat (सत्), chit (चित्), Ananda (आनन्द). Sat सत् means to be good, truthful, and unselfish. Chit चित् means knowledge, Ananda आनन्द means peace.

Now let us think about Shri Ramakrishna. He realized <u>Truth</u> by doing various Sadhanas with the help of or under the guidance of different gurus. For four and a half years he trained Naren—Vivekananda and toiled hard with him so that Vivekananda could understand the Mission of his life. He prepared the mind of Vivekananda so that he (Shri Ramakrishna) can enter into him before leaving his mortal frame. And ultimately Shri Ramakrishna did so. He said to Naren: O Naren, after giving everything to you I have become a Faquir—फ़कीर.

Faquir means he emptied himself into Narendra. Nothing but God remained in Shri Ramakrishna then.

In 1893 the great parliament of Religions took place at Chicago. But the greatest living parliament had already taken place in the life of Shri Ramakrishna at Dakshineshwar when he realized that all religions are different paths to reach the same God, the same truth. He had declared—जतो मत ततो पथ. He declared that the

realization can be attained through any path. All paths are true and valid.

Swami Vivekananda said: Each soul is potentially divine. Nobody is a sinner. We are all children of Immortal Bliss, अमृतस्य पुत्रा. Man's journey is not from untruth to truth. Rather he is evolving from a lower truth to higher truth. He said our aim should be—आत्मनो मोक्षार्थं जगत् हिताय च.

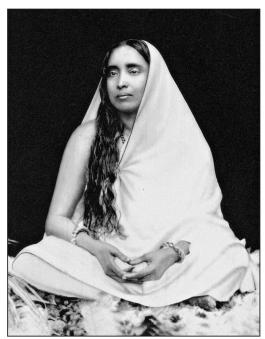
This is his message through his guru Shri Ramakrishna—Realize truth or God yourself and then do something for the welfare of mankind. This is spirituality. So become spiritual right now or you will do so after facing the sufferings in life.

#### II: Ma Sarada (6th April)

सारं ददाति इति सारदा—One who gives the very essence of knowledge is sarada सारदा. There are two vidyas—para and apara परा, अपरा. Both are important for a man to live in this world successfully. For development of spiritual faculty one requires Para परा vidya, and for the development of body and mind Apara अपरा Vidya is required.

Karma कर्म is essential for everyone. Thakur Shri Ramakrishna had said to Mother Sarada: You have to do a lot of work. And Mother realized it after his passing away. Thakur had left Mother behind him to complete his work. Thakur had left her behind so that people can understand the matribhava—मातृभाव.

Mother gave to this world very simple practical way to realize eternal truth. What is matribhava मातृभाव? — To feel the whole world as one's own children as divine.



माँ सारदा

- जन्म : 22 दिसम्बर, सन् 1853 ईसवी।
- स्थान : जयराम बाटी (कामारपुकुर से 4 मील और दक्षिणेश्वर से 60 मील)
- माता-पिता : श्रीमती श्यामा सुन्दरी और श्री रामचन्द्र मुखोपाध्याय।
- भाई-बहन : चार छोटे भाइयों की बहन।
- विवाह : 6-7 वर्ष की अल्पायु में सन् 1859 में 22-23 वर्षीय ठाकुर रामकृष्ण के साथ।
- दक्षिणेश्वर-वास: प्रथम बार सन् 1872 में गंगा-स्नान के लिए जा रहे यात्री-दल के साथ 60 मील पैदल चल कर दक्षिणेश्वर पहुँचीं। बाद में वे आवश्यकतानुसार कभी दक्षिणेश्वर, कभी जयराम बाटी रहती रहीं। ठाकुर के देहावसान के पश्चात् वे प्राय: कोलकता रहा करतीं।
- महासमाधि : कोलकता में 21 जुलाई, सन् 1920 ईसवी को रात्रि डेढ़ बजे।

These two great souls—Thakur and Ma taught the world how to live according to Upanishads by living themselves the Upanishadic way of life. Thakur had asked mother: should you wish I will share with you a worldly life. I will travel your way. But mother is great. She said: No, I haven't come here to bring you down from your path. Rather I have come to help you tread that path.

That is mother's greatness. Both of them have shown to the world: Husband and wife living together in grihastha ashram गृहस्थ आश्रम, their main aim is to realize God. Collectively they should move towards achieving this goal.

Mother fed her children – Thakur's children ठाकुर की सन्तानें with not only food but also divine knowledge. She told her children to understand the difference between good and evil and taught them how to win over evil. Mother said: My children, whenever you are in trouble, you remember me, you call me, I shall come to you.

This is called Smaran yoga स्मरण योग.

Ma Sarada, Holy Mother is our mother. She said: I am a mother to all. Anybody good or bad, I am the mother of all. Hinduism is great to accept Mother too as God.

Holy mother was a karma yogi, कर्मयोगी. Even while doing all the mundane works her mind was always immersed in God, every moment doing japa जप. She told her disciples too to practice it. Outwardly duties but engage your mind in naam-japa नाम-जप.

If anybody asks you: Are you a disciple or a child of mother, what will you say? If you say, yes, I am. It will be wrong because you are not like her. You don't have those qualities in you. So you can say: I am trying to become her child, her disciple.

If we want to be a child of Holy Mother we must follow her commandments:

- 1. If you want peace of mind stop criticizing others and yourself too.
- 2. Start finding and then correcting your own faults.
- 3. No one is a stranger. Love others. Make the world, all your own.
- 4. Don't waste or while away time. Keep busy all the time.
- 5. See how you remain when criticized by others.
- 6. See how you put up with your sufferings in life.
- 7. How do you react at the death of your near and dear ones?
- 8. Can you pray for those who give sufferings to you?
- 9. Are you always aware of your thoughts/ and actions?

Do you practice समत्व योग? Do you retain the same serenity in सुख and दु:ख, जय and पराजय, लाभ and हानि etc.?

•

## श्री म दर्शन-कार्य और meditation — एक सा ही फल

श्री 'म दर्शन' के कार्य में श्रीमती गुप्ता कभी-कभी इतनी मग्न हो जातीं कि उनसे जप-ध्यान न हो पाता। इस बात के लिए उन्हें अफसोस होता, चिन्ता होती। स्वामी नित्यात्मानन्द ने उनकी चिन्ता का समाधान करते हुए श्रीमती गुप्ता को जो बताया था, वह 19 जून, 1970 को अपने गुरुभाई श्री बी.डे. को लिखे उनके पत्र में उल्लिखित है:

"पूज्य महाराज अब सदा कहते रहते हैं कि श्री म ट्रस्ट सेवा, 'श्री म दर्शन' कार्य और meditation -कार्य एक सा ही फल देने वाले हैं। मनुष्य केवल बैठे-बैठे ध्यान नहीं लगा सकता। 'श्री म दर्शन' प्रचार, बेचना, बाँटना और श्री म ट्रस्ट का कार्य करना — यह सब ही व्यक्ति को ठाकुर के साथ योग में रखता है। सो यह कार्य भी ठाकुर-ध्यान ही है, यदि निष्काम भाव से हो सके।"

— नूपुर 1998, पृष्ठ 71



स्वामी नित्यात्मानन्द जी

- जन्म का नाम : जगबन्धु राय।
- जन्म : गंगा दशहरा, सन् 1893 (मामा श्री भैरवराय और श्री गोबिन्दराय के घर)
- स्थान : पूर्वी बंगाल (बंगला देश) के मैमनसिंह जिले का कोठियादि नाम का कस्बा
- शिक्षा : लॉ तक। लॉ करते-करते श्री म के पास जाने लगे। श्री म कथित ठाकुर की बातें डायरी में लिखने लगे।
- दीक्षा : स्वामी शिवानन्द (महापुरुष महाराज) जी से दीक्षित।
- ऋषिकेश-वास : सन् 1938 से ऋषिकेश में वास और 'श्री म दर्शन महाग्रन्थ-माला का लेखन और प्रैस कॉपी की तैयारी।
- सन् 1958 में श्रीमती ईश्वर देवी गुप्ता से भेंट। शेष जीवन प्राय: उन्हीं के वास स्थान को निज आश्रम बनाए रखा। उनकी सेवा-सहायता से श्री म दर्शन का मुद्रण-प्रकाशन आरम्भ। रोहतक में सन् 1967 में श्री म ट्रस्ट की स्थापना।
- महासमाधि : 12 जुलाई, सन् 1975 को # 579/18-बी, चण्डीगढ़ में।

## ग्रन्थकार स्वामी नित्यात्मानन्द जी की दृष्टि में श्री 'म' दर्शन

### —डॉ० नौबत राम भारद्वाज

बंगला श्री 'म' दर्शन का प्रथम भाग जब 1960 में प्रकाशित हुआ तो ग्रन्थकार ने षोडश भागों की इस ग्रन्थमाला को स्वयं कथामृतकार द्वारा श्री श्री रामकृष्ण कथामृत की 'व्याख्या एवं भाष्य' के रूप में प्रस्तुत किया। मूलरूप में पाँच बंगला भागों में 'श्री श्री रामकृष्ण कथामृत' शीर्षक से तथा परवर्ती काल में प्राय: इसी शीर्षक से हिन्दी आदि अनेक भाषाओं में और अंग्रेजी में 'The Gospel of Sri Ramakrishna' नामक जगत्प्रसिद्ध आध्यात्मिक ग्रन्थ के लेखक हैं प्रो. महेन्द्र नाथ गुप्त, जो अध्यात्मप्रेमियों एवं जिज्ञासुओं में 'मास्टर महाशय' अथवा श्री 'म' के रूप में जाने जाते हैं। यह सर्वविदित है कि श्री म को युगावतार भगवान श्री रामकृष्णदेव परमहंस जी का प्रायः साढ़े चार वर्षों तक सान्निध्य लाभ हुआ। उस अवधि में उन्होंने उनके 174 बार दर्शन किए जो श्री श्री रामकृष्ण कथामृत में लिपिबद्ध हैं। श्री श्री ठाकुर के संगलाभ के पुण्य एवं पावनकारी उन अवसरों में उनके सम्पर्क में आए आगन्तुकों, भक्तों के साथ हुए कथोपकथन एवं सम्वादों का आँखों-देखा तथा कानों-सुना विवरण ही है श्री श्री रामकृष्ण कथामृत । अतः वार्तालाप की सरल एवं बोधगम्य शैली में अध्यात्म के अतिसुक्ष्म तत्त्वों के विशद वर्णन की दृष्टि से यह ग्रन्थ है अद्वितीय, अनुपम!

भगवान श्री रामकृष्ण देव 16.08.1886 को इहलोक की नरलीला सम्बरण करके, इस धराधाम में अपना पार्थिव शरीर त्याग कर, भविष्यत् में धर्म की ग्लानि होने पर पुन: अवतरण का शरणापन्न अन्तरंग भक्तों को आश्वासन देकर, चले गए । तदनन्तर आरम्भ हुआ आचार्य श्री म का तन्निष्ठ 'मत्परायण' होकर रामकृष्णमय जीवन जीने की ऐहिक यात्रा का आनन्दमय मधुर जीवन । इस मधुर जीवन की परिपक्वावस्था के अन्तिम दस वर्षों का 'आँखों देखा तथा कानों सुना' एक दिव्य चित्रण प्रस्तुत करता है श्री 'म' दर्शन । अतः ग्रन्थमाला के नवम भाग की भूमिका में ग्रन्थकार लिखते हैं. 'दासीवत संसार में रहने का दिग्दर्शन है श्री म दर्शन। यह श्री म का जीवन वेद है।' सम्भवतः इसी कारण ग्रन्थकार ने इस भूमिका-भाग को 'काँच के घर में श्री म' शीर्षक प्रदान किया है। यहाँ यह तो स्पष्ट है कि ग्रन्थकार इस सम्पूर्ण सत्साहित्य को एक दर्शन मानते हैं और इसमें वर्णित विषय-वस्तु को वेदतुल्य श्रद्धा व प्रामाणिकता प्रदान करते हैं । दर्शन शब्द दृश् धातु से ल्युट् प्रत्यय लगकर निष्पन्न होता है । अतः यह शब्द अपने अभिधेय मुख्य अर्थ की दृष्टि से यह माँग करता है कि जो भी शाश्वत सत्य साक्षात् अनुभव के आधार पर वाणी द्वारा प्रकट होते हैं, वे दर्शन शब्द से अभिप्रेत हैं। ऐसा स्पष्टतया प्रतीत होता है कि श्री 'म' दर्शन के ग्रन्थकार उसे इसी 'दर्शन' की कोटि में रखना चाहते हैं।

रामकृष्णमय जीवन जीते हुए उनकी आध्यात्मिक यात्रा जीवन के अन्तिम दस वर्षों में अपनी परमावस्था को प्राप्त हो गई। जीवन के उस परमोत्कर्ष काल में विधि की विराट एवं दिव्य योजना के अन्तर्गत पूज्य श्रीमत् स्वामी नित्यात्मानन्द जी का आचार्य श्री म से वर्ष 1923 ईसवी में प्रथम साक्षात्कार हुआ। उन्हें लगा कि जीवन के कर्णधार मिल गए हैं जिनकी पदच्छाया में सेवारत रहकर प्राचीन गुरुकुलवत् ऋषि के संरक्षण में मिलने वाली शिक्षा-दीक्षा प्राप्त की जा सकती है। यही थी उनकी आबाल्य सञ्चित सदिच्छा। उन्हीं के शब्दों में:

'बाल्यकाल से ही आरुणि, उपमन्यु और वेदों की बातें पढ़कर गुरुगृह में वास की इच्छा थी ऋषिसंग में। श्री म को पाकर और उनके संग वास करके यह अभिलाषा भी पूर्ण हो गई पूर्ण रूप से। ..... इस घटना के दिन से नित्य श्री म के पास जाने लग गया। उनकी बातें एकाग्रमन से सुनता और लिखता घर लौटकर।... '1

<sup>&</sup>lt;sup>1</sup> श्री 'म' दर्शन, प्रथम भाग, भूमिका, पृष्ठ 31

और इस प्रकार सोलह कुसुम-स्तवकों के रूप में प्रस्तुत किए गए श्री 'म' दर्शन रूपी महाकाव्यी नैवेद्य की आधारिशला भी वर्ष 1923 ईसवी में ठीक उसी प्रकार न्यस्त हुई जिस प्रकार कि 'श्री श्री रामकृष्ण कथामृत' की इसके प्राय: अर्धशताब्दी पूर्व 1882 ईसवी में न्यस्त हुई थी। अत: दैवी विधियोजना के अन्तर्गत 'श्री श्री रामकृष्ण कथामृत' की भावधारा का व्याख्यायित रूप श्री 'म' दर्शन के रूप में पल्लवित और विकसित होना स्वाभाविक ही था। भारतीय संस्कृति व आत्मज्ञान की पथ प्रदर्शक इस षोडशी ग्रन्थमाला को लेखक का 'कथामृतकार द्वारा कथामृत की व्याख्या' कहना सर्वथा संगत एवं समीचीन है। वैसे भी पारमार्थिक धर्मग्रन्थों के प्रारम्भिक सूत्र ग्रन्थों को भाष्य की परम्परया अपेक्षा तो रहती ही है। ग्रन्थकार उन्मुक्त भाव से यह स्वीकार करते हैं कि श्री 'म' दर्शन 'श्री श्री रामकृष्ण कथामृत' के साधनपक्ष का ही एक व्यावहारिक विस्तार है। वे कहते हैं, 'श्री 'म' दर्शन श्री म की कथामृत का नूतन भण्डार है।....श्री श्री रामकृष्ण कथामृत और उनकी भाष्य-सन्तान श्री 'म' दर्शन श्री रामकृष्ण के शान्ति-सुख-आनन्द का उपाय और वाणी वहन करता है।'1

शास्त्रीय ग्रन्थों में मंगलाचरण के तुरन्त बाद 'अनुबन्ध-चतुष्टय' का संकेत देने की परम्परा रही है। अनुबन्ध का शाब्दिक अर्थ है—'साथ बँधा रहने वाला' अथवा 'निमित्त'। ये चार अनुबन्ध हैं—(1) अधिकारी, (2) विषय, (3) सम्बन्ध, और (4) प्रयोजन। अंग्रेज़ी में इन्हें 'Indispensable Elements' या फिर 'Primary Requisites' कहते हैं। इन चारों के ज्ञान के फलस्वरूप ही कोई साधक-जिज्ञासु किसी शास्त्रीय ग्रन्थ का अध्ययन करने के लिए प्रवृत्त एवं तत्पर होता है। किसी भी उक्त ग्रन्थ के अध्ययन के पूर्व स्वभावतः हमें यह जिज्ञासा होती है कि इस ग्रन्थ को पढ़ने का 'अधिकारी' कौन है, इस ग्रन्थ का 'विषय' क्या है, इस ग्रन्थ तथा इसके विषय में क्या 'सम्बन्ध' है तथा इस ग्रन्थ के अध्ययन का क्या फल एवं प्रयोजन है। आइए जानते हैं इस श्री 'म' दर्शन नामक ग्रन्थमाला के सन्दर्भ में स्वयं इसके लेखक की इस सम्बन्ध में क्या अवधारणाएँ हैं।

ग्रन्थमाला के प्रथम भाग की लेखक द्वारा लिखित भूमिका के प्रथम अनुच्छेद में ही हमें मंगलाचरण के तुरन्त बाद ग्रन्थ के अधिकारी का संकेत

<sup>&</sup>lt;sup>1</sup> श्री 'म' दर्शन, चतुर्थ भाग, भूमिका।

मिलता है। वे श्री 'म' दर्शन को 'देवार्चना के अर्ध्यस्वरूप' मानते हैं और मंगलाचरण के रूप में अनेक विघ्न बाधाओं के बावजूद भी श्री 'म' दर्शन के प्रकाशन यज्ञ के शुभारम्भ को प्रभु के प्रति कृतज्ञता के भाव से मंगलमय मानते हैं और अवशिष्ट भागों के यथासमय प्रकाशन के लिए कल्याण-प्रार्थना करते हैं। वहीं हमें यह भी संकेत मिलता है कि ज्वलन्त अनल स्वरूप इस संसार में नाना दुःख-कष्टों से जर्जरित होकर शान्ति की खोज में निकला व्याकुल साधक इस ग्रन्थ के अध्ययन का अधिकारी है। शाश्वत सुख-शान्ति के अन्वेषक इस ग्रन्थ का अध्ययन करने के अधिकारी हैं।

इस ग्रन्थ के प्रतिपाद्य विषय (subject matter) के विषय में ग्रन्थकार कहते हैं', 'इस पुस्तक में है श्री म, परमहंस देव जी और श्री श्री माँ की कुछ नूतन बातें एवं उनके तथा स्वामी विवेकानन्द जी के प्रमुख अन्तरंग और सन्तानों की वाणी। और है 'कथामृत'कार द्वारा कथामृत की व्याख्या तथा श्री रामकृष्ण जीवनालोक में उपनिषद्, गीता, भागवत, पुराण, बाइबल आदि शास्त्रों की आलोचना'।

श्री 'म' दर्शन चतुर्थ भाग की भूमिका में ग्रन्थकार लिखते हैं :

'पूर्व तीन स्तवकों की न्याईं इस बार का स्तवक भी चार प्रकार के सुन्दर सुवासित पुष्पों से है ग्रथित। प्रथम प्रसून इसका—श्री श्रीरामकृष्ण धर्मपरिवार के ठाकुर, माँ, स्वामी जी प्रभृति की वाणी और जीवन का संस्पर्श। द्वितीय प्रसून है—उपनिषद् और गीता, पुराण और तन्त्र, बाइबल और कुरान शरीफ़ आदि शास्त्रों की श्रीरामकृष्ण-भाव-सम्मत व्याख्या। 'कथामृत'कार द्वारा कथामृत का भाष्य इसका तीसरा प्रसून है; और चतुर्थ प्रसून है श्रीरामकृष्ण के अन्यतम पार्षद स्वामी अभेदानन्द महाराज के गम्भीर पाण्डित्यपूर्ण प्रवचन और कथोपकथन।'

अनुबन्ध चतुष्टय के तृतीय तत्त्व 'सम्बन्ध' को लेकर सरलतया निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि ग्रन्थकार को ग्रन्थ के पाठक/अध्येता के सम्बन्ध को लेकर उन्हें बोध्य-बोधक भाव सम्बन्ध ही अभिप्रेत है । यहाँ बोध्य स्वरूप हैं श्री श्री ठाकुर— ईश्वर, प्रभु, आत्मन्, ब्रह्म अथवा

<sup>&</sup>lt;sup>1</sup> श्री 'म' दर्शन, प्रथम भाग, भूमिका का तृतीय अनुच्छेद ।

सर्वनियन्ता, सृष्टि-पालन-संहारकर्ता वह परम तत्त्व; तथा बोधक स्वरूप है स्वयं साधक, जिज्ञासु, परमगित के अन्वेषण में निरत व्याकुल भक्त अथवा सच्चिदानन्द स्वरूप परमेश्वर की खोज में जुटा सन्मार्ग का पथिक तपस्वी। इस सम्बन्ध में पन्द्रहवें भाग की भूमिका का निम्नांकित अंश द्रष्टव्य है:

'श्री म दर्शन का पच्चदश भाग श्री म के जीवन की विस्मयकर वाणी और उनकी अतिमानवीय आचरण की कथा वहन करता है और युगावतार श्री रामकृष्ण एवं ब्रह्मशक्ति माँ सारदा, स्वामी विवेकानन्द प्रमुख त्यागी-संन्यासियों एवं गृहस्थ संन्यासियों की जीवन-कथा भी वहन करता है। और वहन करता है श्री श्री रामकृष्ण कथामृत का सरस, सुललित और सुगभीर भाष्य 'कथामृत' के लेखक द्वारा। उपनिषद्, गीता आदि भारतीय प्राचीन शास्त्र एवं बाइबल, कुरान आदि नवीन धर्ममतों की भगवान श्रीरामकृष्ण की उदार सजीव और रसमय भावसम्मत मनोहर व्याख्या भी वहन करता है। अधिकन्तु, ठाकुर के अन्यतम अन्तरंग पार्षद, श्री रामकृष्ण मठ और मिशन के महान् और सुयोग्य द्वितीय अध्यक्ष ब्रह्मलीन श्री श्री महापुरुष श्रीमत् स्वामी शिवानन्द जी महाराज की दिव्य और अमूल्य वाणी और जीवनवेद भी हृदय में धारण करता है यह पञ्चदश खण्ड।'

अनुबन्ध चतुष्टय के चतुर्थ तत्त्व 'प्रयोजन' के विषय में वे लिखते हैं : 'इस ग्रन्थ का पाठ करके सब में श्रीरामकृष्ण चरणों में भक्ति का उद्रेक हो, यही है ग्रन्थकार की ऐकान्तिक प्रार्थना ।'\*1 इसमें कोई सन्देह नहीं कि श्री म दर्शन के अनेक पाठक एवं श्रोता इस ग्रन्थ का मनन तथा अनुध्यान करके सद्गृहस्थ हुए हैं, वैराग्य-सम्पन्न हुए हैं और उन्होंने परमशान्ति लाभ की है।

ग्रन्थकार की दृष्टि में श्री 'म' दर्शन ग्रन्थमाला एक गद्यात्मक महाकाव्य है । आइए, श्रीमत् स्वामी नित्यात्मानन्द जी की इस स्वीकारोक्ति का काव्यशास्त्रियों द्वारा कहे गए महाकाव्य के लक्षण के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण करें और जानें कि ग्रन्थकार की मान्यता कहाँ तक उचित है।

\_

<sup>&</sup>lt;sup>1</sup> वही; अन्तिम अनुच्छेद की अन्तिम पंक्ति ।

सर्गोबद्ध काव्य रचना महाकाव्य कहलाती है। (2) सम्पूर्ण ग्रन्थमाला का एक ही देवता होता है अथवा धीरोदात्तादि गुणसम्पन्न एक नायक होता है (3) श्रृंगार, वीर और शान्त में से किसी एक रस की प्रधानता होती है और अन्य रस गौण होते हैं। (4) उससे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष संज्ञक चतुर्वर्ग में से किसी एक की फलप्राप्ति होती है। (5) इसमें सन्ध्या, सूर्य, चन्द्रमा, रात्रि, प्रदोष, अन्धकार, दिन, प्रातःकाल, मध्याह्न, मृगया, पर्वत, षड्ऋतु, वन, समुद्र, मुनि, स्वर्ग, नगर, यज्ञ, संग्राम, यात्रा, विवाह, मन्त्र, पुत्र और अभ्युदय आदि का यथासम्भव वर्णन भी दृष्टिगोचर होता है। (6) किव के नाम से अथवा चिरत्र के नाम से अथवा चिरत्र नायक के नाम से इसका नाम होना चाहिए।

ऐसा प्रतीत होता है कि महाकाव्य सम्बन्धी उपर्युक्त परिकल्पना से प्रेरित होकर ही श्री म दर्शन ग्रन्थमाला का प्रादुर्भाव हुआ है। वर्ष 1938 से 1943 ईसवी पर्यन्त प्रायः छः वर्षों तक भिक्षाजीवी होकर ऋषिकेश धाम में रहते हुए ग्रन्थकार स्वामी नित्यात्मानन्द जी ने जब अपनी डायरियों को सुविन्यस्त रूप से एक साहित्यिक ग्रन्थावली का रूप दिया, तो उनके मानस पर महाकाव्य का उपर्युक्त स्वरूप सामने अवश्य रहा होगा। इसीलिए महाकाव्य में अपेक्षित उपर्युक्त सभी आवश्यक घटक श्री म दर्शन के षोडश भागों में यत्र-यत्र सर्वत्र बिखरे हुए दिखाई देते हैं। वर्ष 1965 ईसवी में जब श्री म दर्शन का प्रथम भाग हिन्दी में प्रकाशित हुआ तो इस ग्रन्थ की हिन्दी भाषा अनुवादिका श्रीमती ईश्वर देवी गुप्ता को आशीर्वचन के रूप में ग्रन्थकार कहते हैं:

'वेदमूर्ति युगावतार श्री रामकृष्ण की शिक्षा से वर्तमान जड़ सभ्यता के युग में आचार्य श्री म ने वन के वेदान्त को घर में लाकर मूर्त्त किया अपने जीवन में इसी ऊनविंश-विंश शताब्दी में, ठीक जैसा मूर्त्त हुआ वैदिक युग में तपोवन में ऋषियों के जीवन में। श्री 'म' दर्शन है महर्षि श्री म के जीवन का एक जीवन्त आलेख्य।'

<sup>&</sup>lt;sup>1</sup> महाकाव्य का लक्षण सम्बन्धी यह विवेचन आचार्य विश्वनाथ कविराज द्वारा लिखित "साहित्य दर्पण" नामक ग्रन्थ के षष्ठ परिच्छेद के 315-324 पद्यों में द्रष्टव्य है ।

साहित्यदर्पणकार के अनुसार उपर्युक्त षड् तत्त्व किसी भी पद्यमय या गद्यमय अथवा उभयात्मक रचना के सन्दर्भ में उसके महाकाव्य होने या न होने में निर्णायक माने जा सकते हैं। ग्रन्थकार स्वामी नित्यात्मानन्द जी को श्री 'म' दर्शन ग्रन्थ-माला महाकाव्य के रूप में स्वीकार्य है। उन्होंने इसे महाकाव्य की कोटि में रखा है। इस निष्कर्ष की पृष्टि हेतु निम्नांकित षड् बिन्दु ध्यातव्य हैं:

श्री 'म' दर्शन षोडश भागों में लिखित गद्यात्मक महाकाव्य है। यद्यपि प्रसंगानुसार अथवा प्रतिपाद्य विषय की वास्तविक घटनाक्रम की आवश्यकतानुसार इसमें यत्र-यत्र पद्यात्मक अंश का भी समायोजन किया गया है, तथापि प्रमुखतः यह गद्यात्मक ग्रन्थावली महाकाव्य के रूप में निबद्ध है। षोडश भागों में विभक्त यह ग्रन्थमाला षोडश सर्ग रूपा है।

सम्पूर्ण श्री म दर्शन का एक ही देवता है — युगावतार भगवान् श्री रामकृष्ण । उन्हीं का यह स्तुतिपरक गुणगान है। ज्ञेय-ध्येय-परमादर्श स्वरूप 'अवतार-विरष्ठ' ठाकुर श्री रामकृष्ण के परमानन्दमय वास्तिविक एवं व्यावहारिक रूप को ही यहाँ उजागर किया गया है। इस उद्घाटन के संवाहक ही हैं इस महाकाव्य के धीरोदात्त नायक श्री 'म'। उनकी दैनन्दिन जीवनावली तथा श्री म दर्शन में उल्लिखित घटनावली पर दृष्टिपात करने से उनके चिरत्र के ये 'उदात्त' एवं 'धीर' पक्ष स्पष्टतया उभर कर सामने आ जाते हैं। उनका महर्षितुल्य जीवन उनकी उदात्तता का परिचायक है और उनके क्रिया-कलाप, व्यवहार उनके धीर-समुद्र-गम्भीर स्वभाव को द्योतित करते हैं।

साहित्यिक दृष्टि से श्री 'म' दर्शन में प्रमुखतया शान्तरस प्रवाहित है, परन्तु प्रसंगवश उठन्त यौवन सम्पन्न युवा भक्तों में उत्कट आध्यात्मिकता का सञ्चार करने के निमित्त कुछेक स्थानों पर उनकी वाणी वीररस से ओतप्रोत हुई भी प्रतीत होती है। इस सत्य के निदर्शनस्वरूप श्री 'म' दर्शन के उस प्रसंग का अवलोकन करें जहाँ 22 मार्च, 1924 ईसवी को श्री म अन्तेवासी से आयंगर महाशय की बेलुड़ मठ में उसी दिन प्रातः सम्पन्न हुई संन्यास-दीक्षा का सम्वाद प्राप्त कर रहे हैं। संन्यासोपरान्त उनका नाम हुआ श्रीवासानन्द। प्रत्येक आगन्तुक से श्री म कह रहे हैं, 'नारायण आयंगर महाशय को देखिए ना। भीतर से भी छोड़ा है और फिर बाहर से भी छोड़ा

है। कल ही संन्यास हुआ है, अब तीव्र वैराग्य है। सब है—अर्थ, मान, यश, पुत्रकन्यादि और कुल। सद्ब्राह्मण हैं कि ना — सब कुछ है, किन्तु समस्त त्याग किया है। कैसा तीव्र वैराग्य! जिला मैजिस्ट्रेट थे। उनको देखना उचित। देखने से चैतन्य हो जाता है।' परवर्ती आगन्तुक भक्तों के साथ उनका वार्तालाप ओजपूर्ण है और वीररस से परिपूर्ण है।

श्री म दर्शन के चतुर्थ भाग (पृ. 18) में वे कहते हैं—"संसार युद्धक्षेत्र है, अनवरत युद्ध चलता है। म्यान से निकली तलवार होकर रहना उचित — सर्वदा जाग्रत सशस्त्र सैनिकवत्। कब क्या विपद् घटे!" इसी प्रकार के अन्य भी अनेक स्थलों पर वीररस गौण रूप से अनुस्यूत हुआ है। परन्तु शान्त रस तो सभी षोडश खण्डों में अन्तःसलिला फल्गु नदी के जल की भान्ति सतत निरवच्छिन्न रूप से प्रवाहित है।

महाकाव्य के स्वरूप-निर्धारण के विषय में कहा गया है कि वह काव्यरचना स्वरूपत: महाकाव्य है जिससे चतुर्वर्ग में से किसी एक 'वर्ग' की प्राप्ति फलस्वरूप हो। यह तो स्वत: स्पष्ट है ही कि श्री 'म' दर्शन के सम्यक् परिशीलन से एक नहीं, धर्म तथा मोक्षस्वरूप दो-दो वर्गफलों की प्राप्ति होती है। अत: श्री म दर्शन को महाकाव्य निर्विवाद रूप से स्वीकार किया जा सकता है।

महाकाव्य का पञ्चम आवश्यक तत्त्व यथाप्रसंग यथोचित प्रकृति वर्णन एवं चित्रण की अपेक्षा रखता है। श्री 'म' दर्शन के सभी षोडश खण्डों में प्रसंगानुसार ऐसे वर्णनों एवं चित्रणों का समावेश किया गया है। कई स्थलों पर तो वर्णन इतने हृदयग्राही एवं मनोमुग्धकर बन पड़े हैं कि पाठक अभिभूत हो उठता है और कल्पनालोक में प्रकृति के मनोरम दृश्यों से इतना तादात्म्य कर बैठता है कि उसे ब्रह्मानन्द की अनुभूति होने लगती है। उदाहरण के लिए श्री म दर्शन के प्रथम भाग के द्वितीय अध्याय का यह अनुच्छेद देखिए:

'सन्ध्याकालीन ध्यान, कथामृत पाठ और रात्रि-भोजन समाप्त हो गया। अब रात के सवा नौ बजे हैं। कृष्ण पक्ष। शिरोपरि अगणित उज्ज्वल नक्षत्र-खचित विस्तीर्ण नभोमण्डल। नीचे कृष्णपक्षीय नैश-अन्धकार घनीभूत। समीप में एक-दो वृक्ष ही दृष्टिगोचर होते हैं। नीरवता मानो हृदय में प्रवेश करके एक प्रशान्त गम्भीर भाव की सृष्टि कर रही है। सुविस्तृत प्रान्तर् के बीच स्थित कुटीर के प्रांगण में ब्रह्मचारियों के साथ श्री म बैठे हैं। दृष्टि उच्च आकाश में निबद्ध है। क्षण भर बाद एक ब्रह्मचारी को कह रहे हैं, "..... नभोमण्डल का चिन्तन करने से ईश्वर की विशालता का आभास मिलता है"।'

श्री म दर्शन के इसी खण्ड के प्रथम अध्याय में इस महाकाव्य के नायक श्री म की शब्दचित्र द्वारा अंकित छवि को जरा निहारिए :

'श्री म हैं दीर्घाकृति, सुदृढ़ शरीर और गौर वर्ण । उनके हैं ललाट उन्नत, वक्ष सुविस्तृत, बाहु आजानुलम्बित तथा सम्मुख प्रसारि विशाल नयन-द्वय अनुक्षण प्रेमानुरञ्जित । उनके आवक्षविलम्बित श्वेत-श्मश्रु-शोभित दिव्य वदन-मण्डल पर है एक प्रशान्त अतिगम्भीर भाव विराजमान । सौम्यदर्शन, सुरसिक और मधुरभाषी रामकृष्ण-भाव-विभोर यह महायोगी अहर्निश रामकृष्ण गुणगान करने के लिए मानो जीवन धारण किए हैं।.....'

अतिवृष्टि के कारण जलप्लावित कोलकाता महानगर को देखिए :

'आज कलकत्ता वेनिस नगरी में परिणत है। सुबृहत् राजपथ समूह जलमग्न हैं। दोनों ओर अट्टालिका-समुद्र के मध्य से नदी बह रही है। ऐसी ही असंख्य नदियाँ हैं। किसी-किसी स्थान पर जल जमा होकर गहरा हो गया है। उस पर छोटी नौका अनायास ही चल सकती है। ट्राम, घोड़ा-गाड़ी आदि प्रायः बन्द हैं। अपराह्ण पाँच बजे से मूसलाधार वर्षा हो रही है। महानगरी मानो किसी राजचक्रवर्ती का प्रमोद-कानन हो गया है। कारण, शोभायमान करने के लिए मानो सब कृत्रिम नदियाँ प्रवाहित हैं।'

'जो ऑफिस में कर्म करते हैं, वे अति कष्ट से लौट रहे हैं। कोई-कोई पोशाक, बूट आदि की पोटली बाँधे सिर पर रखे जल काट-काट कर चल रहे हैं। कोई सब पहने बिल्कुल भीगते हुए जा रहे हैं। किसी-किसी रास्ते पर सवारी की मोटरें दोनों ओर जल के फव्वारे सृष्टि करती हुई चली जा रही हैं। मॉर्टन स्कूल के सम्मुख इतना जल है कि धोती ऊपर उठाकर चलते हुए लज्जा रक्षा रखना कठिन हो गया है। अमहर्स्ट स्ट्रीट के उत्तर प्रान्त में लाहाओं के प्रासाद के निकट तैरने योग्य जल है। इस दुर्दिन में भी कई जन भक्त मॉर्टन स्कूल में आए हैं सत्संग की इच्छा से।'

प्रकृति चित्रण की छटा का अनुपम सम्पुट अन्यत्र भी द्रष्टव्य है :

'पुरीधाम । समुद्र तट । अतिप्रत्यूषे भक्तगण श्री म के संग समुद्र पर सूर्योदय दर्शन करते हैं । बालसूर्य समुद्र-गर्भ से उठ रहा है । कैसा मनोमुग्धकर दर्शन है ! जैसा नयनमधुर, वैसा ही हृदय रञ्जन । लवणाम्बु का नील जल सुनहरी आभा से रञ्जित है । अनिमेष नयन से भक्तगण दर्शन करते हैं । एक सुन्दर शोभन विशाल स्वर्णगोलक समुद्र-जल में डुबकी लगाकर ऊपर उठा ।

'प्रत्यक्षदर्शी श्री म आनन्द के आवेग से भक्तों से कहते हैं, "इस बालसूर्य के अभ्यन्तर में ऋषियों ने ब्रह्मदर्शन किया था। जभी तो फिर सुदृढ़ गम्भीर कण्ठ से गाया था—'योऽसावसौ पुरुषः सोऽहमस्मि।'¹

"इसलिए सबका ही दर्शन करना चाहिए — नैसर्गिक दृश्य—सूर्य, चन्द्र, तारका; और फिर सागर, आकाश, हिमालय। ठाकुर इन सबके दर्शन करने के लिए कहते थे। उससे 'उनका' उद्दीपन होगा। समुद्र के तीर पर एकाकी बैठने पर हृदयविहारी भगवान का स्मरण आता है"।'2

इसी प्रकार श्री म दर्शन में चन्द्र, सूर्य, सागर, पीपल, गंगा, माघ तथा वसन्तादि ऋतुओं का जीवन्त हृदयग्राही विवरण हमें गीता में वर्णित श्री भगवान् के विविध रूपों का स्मरण करवाता है; जैसे 'ज्योतिषां रिवरंशुमान्' (ज्योतियों में मैं जाज्वल्यमान सूर्य हूँ—10:21); 'नक्षत्राणामहं शशी' (नक्षत्रों में मैं चन्द्रमा हूँ—10:21); 'सरसामिस्म सागरः' (जलाशयों में मैं समुद्र हूँ—10:24); 'स्थावराणां हिमालयः' (स्थिर रहने वालों में मैं हिमालय पर्वत हूँ—10:25); 'अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां' (वृक्षों में मैं पीपल का पेड़ हूँ—10:31); 'स्रोतसामिस्म जाह्नवी' (निदयों में मैं गंगा हूँ—10:31) 'मासानां मार्गशीर्षोऽहमृतूनां कुसुमाकरः (महीनों में मैं मार्गशीर्ष और ऋतुओं में मैं वसन्त हूँ—10:35) । प्रकृति में उपलब्ध प्रभु के इन विविध रूपों के माध्यम से श्री म साक्षात् प्रभु-सान्निध्य में पहुँच जाते हैं और संगी भक्तों को भी प्रभु की उपस्थिति का एहसास करवा देते हैं । श्री म दर्शन के प्रथम भाग का निम्न वर्णन देखिए :

<sup>&</sup>lt;sup>1</sup> यह जो 'पुरुष' है, वही मैं हूँ । —

<sup>&</sup>lt;sup>2</sup> श्री म दर्शन, हिन्दी, चतुर्दश खण्ड, पृष्ठ 100

'आकाश घने मेघों से आच्छादित। अब समय अपराह्ण चार। मेघों के साथ ही हवा भी प्रबल वेग से प्रवाहित हो रही है। श्री म अपनी कुटीर से बाहिर जम्बुतले आ गए। न जाने किस भाव में उनका मनप्राण है भरपूर। मुखमण्डल उज्ज्वल। नयनों में एक अपूर्व आनन्द कर रहा है छल-छल। दृष्टि आकाश में निबद्ध। कुछ समय पश्चात् भाव-विजड़ित कण्ठ से श्री म कहने लगे:

"आकाश में मेघ देखकर प्राचीन ऋषियों की बात स्मरण हो रही है। उन्होंने षड्ऋतुओं में से जाकर ही उनको पाया था। ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त, शिशिर, वसन्त, इन सब ऋतुओं का उल्लेख उनकी वाणी में प्रकट हुआ है। 'कथामृत' में भी षड्ऋतु का वर्णन है। Between the lines—ध्यानपूर्वक पढ़ने से पता चल सकता है कि कौन सी बात किस मौसम की है। ठाकुर बललाया करते थे, वे आकाश में मेघ देखते ही नृत्य करने लग जाया करते थे।'

"तीर, सागर, प्रांतर् इन सब स्थानों पर भगवान का उद्दीपन होता है। इसीलिए दार्जिलिंग से जब मैं लौटकर आया था तो ठाकुर ने मुझसे केवल एक ही बात पूछी थी, "हिमालय देखकर उद्दीपन हुआ था क्या ?' और कोई बात नहीं। मैं दूर से हिमालय देखकर रो पड़ा था, वही कह दिया। तब इसका कारण मैं जानता नहीं था ना, 'स्थावराणाम् हिमालयः'; बाद में जान पाया। तब तो अनजाने ही उद्दीपन हुआ था। ठाकुर कहते थे, 'अनजाने मिर्च खाने पर भी झाल तो लगेगी।'

"आहा! ऐसे ही सब स्थानों, वनों, प्रांतरों में ऋषि वास किया करते थे, मिहिजाम की तरह। यहाँ निर्जन प्रांतर्, सरलप्राण कृषक, वन, आकाश में मेघ, प्रभाती सूर्योदय, संध्याकालीन-सूर्यास्त इन सबका दर्शन होता है। यहाँ का है सब कुछ सुन्दर, शान्त, स्वाभाविक, कृत्रिमता नहीं। शहर की भान्ति चंचलता यहाँ नहीं। राजनीति-समाजनीति, शोरगुल यहाँ नहीं। है केवल प्रकृति का अफुरन्त सौन्दर्य भण्डार; पवित्र, शान्त, ईश्वरीय भाव उद्दीपन और रात को अगणित नक्षत्र मण्डित आकाश तथा शुक्लपक्ष की चन्द्रिकरण। इन्हीं सब ऐश्वर्यों का उपभोग करते थे प्राचीन ऋषि।

"देखिए, आकाश में मेघों ने उठकर उसे कैसा सुन्दर बना दिया है। यह देखिए, इन्द्रधनुष बना। कितना सुन्दर, कैसा सुन्दर! प्रकृति के इसी सौन्दर्य भण्डार का उपभोग किया करते थे ऋषिगण । हर वस्तु में भगवान का उद्दीपन" ।'

अन्यत्र भी प्रकृति का यह आनन्दप्लावित मनोरम नैसर्गिक रूप देखिए:

'अति प्रत्यूषे भक्तगण अश्वत्थमूले ध्यान करने बैठे। श्री म भी जाकर बैठ गए। अब ब्राह्ममुहूर्त्त। क्रमशः पूर्विदिशा उषा का आगमन सूचित कर रही है। पूर्वाकाश ईषत् प्रकाशित। ईषत् रक्तिमाभा आकाश के शरीर पर विलुण्ठित हुई पड़ी है। विहगकुल अभी-भी जाग्रत हुए नहीं, अभी तक उन्होंने ईशगुणगान करना आरम्भ किया नहीं। वसन्त का मृदुमन्द समीरण प्रवाहित हो रहा है। भक्तगण त्रिकालज्ञ ऋषि संग बैठे हैं, ध्यानमग्न! कैसा पवित्र भाव, कैसा पवित्र समय, कैसा सुपवित्र स्थान! धर्मपथ पर यह दृश्य क्या दुर्लभ नहीं? रात्रि का अन्धकार विदूरित होकर उषा के नवीन आलोक का सम्पात हो रहा है। भक्तगण क्या यही भावना कर रहे हैं, श्री श्री ठाकुर की कृपा से हमारा भी क्या इसी प्रकार अज्ञानान्धकार विदूरित होकर ज्ञानलोक प्रकाशित होगा?'1

महाकाव्य होने का अन्तिम आवश्यक तत्त्व है कि उस ग्रन्थ का नाम किसी किव के नाम से अथवा चिरत्र-नायक के नाम से होना चाहिए। दोनों दृष्टियों से ही श्री म दर्शन को महाकाव्य कहना उचित ही है। प्रथम तो षोडश खण्डों में विभक्त इस ग्रन्थ साहित्य के चिरत्र नायक हैं श्री म जो कि अद्यतन सद्साहित्य एवं आध्यात्मिक जगत् में एक लब्धप्रतिष्ठ एवं ख्यातिप्राप्त उपनिषद् 'किव' हैं।

अतः स्फुटतया कहा जा सकता है कि श्री म दर्शन के विषय में ग्रन्थकार का इसे महाकाव्य कहना सर्वथा उचित ही है।

<sup>1</sup> श्री म दर्शन प्रथम भाग, पृ० 93

## Thakur's Training

"Thakur had an eye on everything. Devotees who went to him were trained by personal demonstration. He used to say, 'He who can keep account of salt can also keep account of sugar-candy.' A person who is slovenly, ever careless in the simple tasks of daily life, will have difficulty progressing in spiritual life. It is with this very mind that one reaches Him. If there is insincerity or mistaken ideas in the mind, He cannot be attained. Because he bought a pot with a crack in it, Yogen Swami (Swami Yogananda) was scolded badly by Thakur. He said to Yogen, 'Is the shopkeeper Yudhishthira, a personification of spirituality? He will, of course, try to sell his trash. Why didn't you examine it before bringing it here? You have eyes in your head.' He was asked to go back then and there and bring a new one in exchange.

•••

"The whole life should be a spiritual life, all work spiritual practice. Religious conduct for a while and contrary conduct afterwards will not do. Whether eating, walking, sleeping, dreaming, telling beads, concentrating, worshipping or reading the scriptures, in every condition, the mind should remain centered round one thought, one ideal: realization of God."

—'M., the Apostle and the Evangelist-1, ch. 4, pg. 81-82'



श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता (1915 - 2002)

- माँ सारदा के जन्मोत्सव पर सन् 1958 की प्रथम भेंट से ही स्वामी नित्यात्मानन्द जी की अन्तरंग शिष्या एवं उनके पश्चात् श्री म ट्रस्ट की आजीवन अध्यक्षा।
- स्वामीजी द्वारा रचित बंगला 'श्री म दर्शन' ग्रन्थमाला का प्रकाशन और उसका हिन्दी-अनुवाद तथा प्रकाशन।
- बंगला कथामृत का हिन्दी-अनुवाद तथा प्रकाशन।
- इनके पति प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता द्वारा
  - हिन्दी 'श्री म दर्शन' का M., 'the Apostle and the Evengelist' नाम से तथा
  - हिन्दी 'श्री श्री रामकृष्ण कथामृत' का 'Sri Sri Ramakrishna Kathamrita' नाम से ही अंग्रेज़ी-अनुवाद और प्रकाशन।

# श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता विषयक स्मृतियाँ

# श्रीमती संगीता कपूर

एक बार माता जी श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता<sup>1</sup> ने मुझसे कहा था - देखो, जो लोग तुम नए लोगों से पहले के इस ट्रस्ट के साथ जुड़े हैं, उनसे बात करना, जानना कि ट्रस्ट के साथ जुड़कर उन्हें कैसा लगा। फिर उसे लिखना और एक-एक करके इन सबको 'नूपुर' में देना। इससे आगे आने वालों को प्रेरणा मिलेगी।

माता जी के आदेशानुसार कार्य प्रारम्भ हुआ। इस कड़ी में अब तक स्वामी नित्यात्मानन्द के मन्त्र दीक्षित शिष्य प्रो० धर्मपाल गुप्ता, श्रीमती विजया प्रभाकर, श्रीमती पद्मा गाडी, श्रीमती प्रवेश बजाज के स्वामी नित्यात्मानन्द व श्रीमती ईश्वरदेवी विषयक संस्मरण क्रमशः 1997,98 व 2018 के नूपुरों में तथा श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता की शिष्या श्रीमती निर्मला कालिया² के श्रीमती गुप्ता विषयक संस्मरण स्मारिका 'लाइयाँ ते तोड़ निभाइयाँ' (1916) में प्रकाशित हो चुके हैं।

इस वर्ष के नूपुर में श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता की शिष्या श्रीमती संगीता कपूर के संस्मरण दिए जा सकें, इस विचार से मैं और डाँ० नौबतराम भारद्वाज (स्वामी नित्यात्मानन्द जी द्वारा मन्त्र-दीक्षित) 8 दिसम्बर, 2018 को संगीता जी के निवास-स्थान 169/21ए/चण्डीगढ़ पहुँच गए। उनके लिए सुविधाजनक समय हमने फोन करके पहले से ही सुनिश्चित कर लिया

 $<sup>^1</sup>$  श्री म ट्रस्ट के संस्थापक स्वामी नित्यात्मानन्द जी की अन्तरंग शिष्या तथा ट्रस्ट की द्वितीय प्रधान ।

<sup>&</sup>lt;sup>2</sup> ये सभी भक्तजन अब देहगत हो चुके हैं ।

था और तदनुसार लगभग 11 बजे (प्रातः) उनके यहाँ पहुँच गए। कम्प्यूटर शिक्षा प्राप्त उनकी बेटी प्रेरणा घर पर ही थीं। अपनी अस्वस्थ वृद्धा माँ की देखभाल के लिए उन्होंने विगत कुछ महीनों से नौकरी छोड़ दी है और घर से ही कुछ कार्य कर लेती हैं।

संगीता जी को डायरी लिखने का अभ्यास था और माता जी श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता से मिलने के बाद उनके साथ हुईं कुछ वार्ताएँ, अपने कुछ अनुभव वे एक डायरी में लिख रखतीं। हमने उनसे कुछ प्रश्न किए तो कुछों का उत्तर तो उन्होंने दिया। फिर उन्होंने अपनी वह डायरी ही हमें थमा दी और कहा - आप इसे ले जाइए। इसमें आपको वह सब मिल जाएगा जो आप मुझसे पूछना चाहते हैं। तो उनके स्वयं दिए उत्तरों व उनकी इस डायरी के आधार पर प्रस्तुत हैं श्रीमती संगीता कपूर की माता जी श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता विषयक कुछेक स्मृतियाँ, उनके कुछेक संस्मरण:

संगीता जी (30 मार्च, 1940 को जन्म) माता जी से प्रथम बार 17 जनवरी, 1986 को मिली थीं। उन्होंने बताया; पित की मृत्यु के पश्चात् मैं भीतर से उदास रहती थी और खोज में थी कि मैं किसी महान् व्यक्तित्व से जुड़ जाऊँ। एकदिन लाईब्रेरी ढूँढ़ते-ढूँढ़ते सेक्टर 19 में श्री पीठ-मन्दिर पहुँच गई। बड़ी बेटी प्रीति साथ में थी। वह बी.ए. करने के बाद c.s. की पढ़ाई कर रही थी। वहाँ से सेवक सुरेशानन्द ने हमें दीदी जी (मैं श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता को 'दीदी जी' कहकर ही बुलाती) के पास उनके निवासस्थान 579, 18-बी में भेज दिया। यहाँ पहुँची तो देखा दीदी जी किसी काम में व्यस्त हैं, शायद कोई accounts मिला रही थीं। मुझे देखते ही ज़ोर-ज़ोर से ताली बजा कर नाचने लगीं। बोलीं - भेज दिया, भेज दिया, ठाकुर ने भेज दिया। बाद में मालूम हुआ कि ट्रस्ट के accounts का काम करने के लिए उन्हें किसी जन की तलाश थी। आज के दिन मुझे लगा दीदी जी से मिलकर मेरी चिर साध पूरी हो गयी। लगा सुयोग ने मुझे एक ऐसे स्थान से जोड़ दिया है कि यह मेरे जीवन का आश्रय-स्थल ही बन गया। दीदी जी के पास फिर-फिर आने की इच्छा हुई।

अपनी डायरी में वे लिखती हैः तीसरी बार जब मिली तो अपना अतीत का समस्त जीवन चित्रवत् उनके समक्ष रख दिया । आँखों से निरन्तर अश्रुधारा बह रही थी। मैंने महसूस किया कि मेरी जन्मदात्री माँ भी मुझे वह सुकून न दे सकतीं जो मुझे दीदी जी के चरणों में मिला। फिर यह भी लगा कि अपनी व्यथा-कथा सुना कर मैंने इन्हें नाहक दुःखी किया है और यह भाव व्यक्त भी कर दिया। वे बोलीः "मैं भला क्यों दुःखी होंऊँगी। एक बर्तन जो जला-सड़ा पड़ा है, उसे ही साफ़ करके उसमें नया पकवान बनाऊँगी।" उनके इस स्नेहिल उत्तर ने मुझे सदा के लिए शान्त कर दिया। धीरे-धीरे मुझे हीन भावना से मुक्ति मिलने लगी। मन को भरोसा मिला। फिर-फिर जब भी मानसिक तौर पर तनाव महसूस करती, वे ठाकुर श्री रामकृष्ण की, माँ सारदा की, मास्टर महाशय (श्री म) की बातें सुना कर मुझे शान्त कर देतीं।

एक दिन ठाकुर-वाणी सुनाते हुए उन्होंने मुझे बताया - ठाकुर कहते हैं, एक हाथ से भगवान को पकड़ो और दूसरे से संसार करो । इसका जीवन्त, ज्वलन्त उदाहरण वे स्वयं थीं । गृह के सभी कार्य करते-करवाते हुए भी कथामृत, श्री 'म' दर्शन-बंगला से हिन्दी-अनुवाद व उसके प्रकाशन-कार्य में वे दत्तचित्त से लगी रहतीं भले ही शरीर की अवस्था जीर्ण-शीर्ण ही रहती । उन्होंने बताया ठाकुर कहते हैं - लज्जा, घृणा, भय, इनके रहने से होगा नहीं । दीदी जी के समीप रहते हुए ये तीनों मेरे मन से निकल गए थे। तीनों ने उनके समक्ष घटने टेक दिए और मैं खुलकर उनके साथ बात करती । वे मेरी गुरु जो थीं । ठाकुर के तीन मन्त्र—उदार, फुंकार (पर विष नहीं छोड़ना और दूर से नमस्कार, इनकी महत्ता और जीवन में इसका पालन—यह भी जीवन्त गुरु दीदी जी के पास रहते हुए ही सीखा । एक बार उन्होंने बताया - देखो, ठाकुर कहते हैं - इस संसार में रहते हुए, गृहस्थ-धर्म निभाते हुए एक हाथ से भगवान को दृढ़ता से पकड़ कर रखना हो, उसके लिए चातुरी चाहिए । यही चातुरी ही वास्तविक चातुरी है । उन्होंने बताया - ईश्वर के साथ जुड़े रहने से ईश्वर के साथ प्यार होने लगता है और फिर दुसरों में दोषदर्शन की वृत्ति कम होने लगती हैं जो पारिवारिक व सामाजिक जीवन में अनेक मानसिक क्लेशों की जड़ है।

फिर उन्होंने सिखाया— हर प्रश्न, हर समस्या ठाकुर को समर्पित कर दो । सब कर्म करते-करते भीतर मानसिक जप चलता रहे, यह अभ्यास करो । इससे बुद्धि स्थिर होगी, अनेक विपत्तियाँ टल जाएँगी और ठाकुर में विश्वास पक्का होगा । और कहा - साधुसंग सर्वदा दरकार । बताया जिसके समीप बैठने से, जिसकी बात सुनकर मन को शान्ति मिले और मन भगवान में जाए, वही है सच्चा साधु ।

एक दिन आधी रात के समय तीन बजने में दस मिनट थे। अचानक नींद खुल गई। उठी, उठकर हाथ-मुँह धोए और बैठ गई। एकदम एक स्निग्ध, शान्त, आनन्दमय प्रकाश मेरी आँखों के सामने फैल गया। इधर-उधर देखा। कुछ भी नज़र नहीं आया। क्या हुआ, समझ ही न पाई। अगले दिन दीदी जी को सब कह सुनाया। वे बोलीं—ईश्वर में हमारा विश्वास दृढ़ हो, इसीलिए कभी-कभी यह ज्योति-दर्शन होता है। भगवान विश्वास दिलाते हैं कि मैं तुम्हारे साथ हूँ।

स्वयं में विश्वास दृढ़ हो, इसके लिए वे कहतीं—पहले निश्चय करो कि मैं कहाँ खड़ी हूँ। फिर अपनी retrospective life देखो। अब compare करो कि कितना आगे बढ़ी हूँ। इससे अन्दर में शक्ति जागृत होगी। तब और आगे बढ़ सकोगी। स्वयं पर विश्वास, गुरु पर विश्वास और फिर ईश्वर पर विश्वास। जिसे गुरु मिल गया, वह धन्य है। मैंने भी सोचा - एक वह समय था जब जीवन के उस मोड़ पर खड़ी थी जहाँ मैं असहाय थी, अकेली थी, भयभीत थी, आँखों के सामने बस अन्धकार छाया था। अब दीदी जी के रूप में गुरु मेरे पास हैं। मन में कहती - अब और क्या चाहिए?

दीदी जी का अपना जीवन था प्रैक्टीकल। वे कहतीं—केवल कहने के लिए कोई बात मत कहो। जो कहो, उसे करो भी। उनका था मन-मुख एक। उन्होंने मुझे accounts का काम सिखाया। वे स्वयं थीं perfectionist. पर मुझसे तो भूल हो ही जाती। कभी भूल हो जाती तो प्यार से समझा देतीं। उनका था - no compromise. कहतीं - हर काम को खूब मनोयोग से पूरा करो। इससे गलती की सम्भावना ही न रहेगी। मुझे कहतीं— तुम्हें काम निपटाने की जल्दी लगी रहती है। इसीलिए गलती हो जाती है।

उनके पास रहते हुए काम करना, काम सीखना - यही मेरा प्रमुख लक्ष्य था । ट्रस्ट में आने वाले सभी पत्रों के उत्तर भी मुझसे लिखवातीं । इनमें साधुओं के पत्र भी होते । उन्हें पत्र कैसे लिखना है, यह सब उन्होंने मुझे सिखा दिया । साधुओं को लिखे पत्र में कुछ भी भूल रह जाने पर वे पत्र को फाड़ देतीं और गलती बता कर पुनः लिखने को कहतीं। उनसे काम सीखना बहुत अच्छा लगता। उनके पास पहुँचते ही काम में लग जाती। ट्रस्ट में होने वाले उत्सवों की सूचनार्थ पोस्टकार्ड भी मुझे ही लिखने होते थे। सायंकालीन आरती-पूजा के लिए श्री म ट्रस्ट के सेक्टर 19 स्थित मन्दिर (श्री पीठ) में भी जाती। छोटी बेटी प्रेरणा मेरे साथ ही रहती। बड़ी बेटी प्रीति का विवाह हो चुका था।

कहाँ तक कहूँ, दीदी जी ने मेरे जीवन को एक नई दिशा दी। सदा लगता कि मेरे दुःखों, मेरी समस्याओं को वे अपने ऊपर ले लेती हैं और मुझे हल्का कर देती हैं। लगभग 13-14 वर्ष रही उनके साथ। जीवन के अन्तिम पड़ाव में भी वे सदा मेरे अंग-संग रहती हैं। कोई भी दुःख, तकलीफ़ हो, मुझे उनकी आवाज़ सुनाई देती है - घबराओ मत, मैं हूँ ना!

- प्रस्तुति : निर्मल मित्तल

# नूपुर तेरे चरणों का

श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता अपने गुरु स्वामी नित्यात्मानन्द के संग रहीं लगभग 16 वर्ष तक (सन् 1958 से 1975 तक)। इस सुदीर्घ काल में अपने गुरु के संग रहते-रहते उनकी मन:स्थिति में धीरे-धीरे परिवर्तन आने लगा। महाराज जी से मिलने के लगभग पाँच वर्ष पश्चात् सन् 1963 में तो वे उन्मनी-सी रहने लगीं— हर समय जैसे इस जगत से दूर, कहीं और खोई हुई— भाव में। उन्हीं दिनों उन्होंने अनेक मनोभाव, विचार कविताबद्ध किए। उन द्वारा रचित यह गीत भी उन्हीं दिनों (16 मई, 1964) का है। तब वे बाह्य रूप से थीं उन्मादवत् पर भीतर से आनन्द ही आनन्द। वे यूँ रहतीं जैसे प्रतिपल हों वे माँ के संग, जैसे वे हों माँ के चरणों का नूपुर, दिन-रात 'माँ' के अंग-संग।

नूपुर तेरे चरणों का, मैं यदि बन पाऊँ माँ।
तेरे चरण की हर गति के संग-संग बज पाऊँ माँ॥
तेरे कदम की हर झंकार में, मन मेरा बज जाए माँ।
इसी तरह दिन-रात के संग से, भेद तुम्हारा पाऊँ माँ॥
तुम हो कौन, मैं हूँ कौन, खोज यदि पा जाऊँ माँ॥
नूपुर-गति से दूर रहूँ तब, मौन गीत सुन पाऊँ माँ॥

**—**नूपुर-2015, पृष्ठ 30

# **Extracts from M. The Apostle and the Evangelist**

#### M.'s contribution towards Ramakrishna Movement

- Collection: Sh. Nitin Nanda

Sri M. was appointed by Sri Ramakrishna to live in the household by granting him 1 kala of Divine Power from Mother Kali. Even when Sri M. used to visit Sri Ramakrishna several devotees came in contact with Sri Ramakrishna through Sri M. Later on, Sri M. used to encourage the young devotees who used to visit him to join the Belur Math to lead a monastic life. Several young men came to know about Sri Ramakrishna by reading the Kathamrita, or the Gospel and decided to join Belur Math as sannyasis. This is well-established from the following passage of M., the Apostle & the Evangelist.

Hariprasanna Maharaj (Swami Vijnanananda) – Master Mahashay, Thakur was unique and so is the writer of his Kathamrita. I have carefully noted that your words work more on the boys than those of Swamiji. And one likes them too. So I say that the Kathamrita is unique so is his writer. Every time I read it I find there is some thing new in it. Aha!What a matchless book you have written. After enquiring I have come to know that some fourteen annas (out of sixteen annas in a rupee, eithty-five percent) men have embraced sannyasa after reading the Kathamrita and after meeting you.

"I have been thinking of telling you this for many days. Today I got a chance so I am telling you. Truly it is as interesting as a play. Every time I read it I feel it is new – I get new light from it.

"In this context Swami Vivekananda's letter comes to the mind '. . . I now understand why none of us attempted his life before. It has been preserved for you, this great work. And that, Socratic dialogues are Plato all over. You are entirely hidden'."

M. (Smiling aside) – The boy says, 'See Mother, how potatoes and parval (a vegetable) are jumping (in the boiling water).' Pull the firewood a little and it all cools down. All this is the trick of that magician.

—M., The Apostle and the Evangelist – XI (page – 184)

#### Free will / God's Will

M. (to bhaktas) — People talk 'free will, free well.' But, where is this 'free will'? It is all God's will. Man knows nothing before he was born and knows nothing what would happen to him after death. And for him to talk of fee will!

"(pointing at Harnath) How much he talks about free will! Let me see where his free will is. Go deep into it, you will see that it is all His will. He has hidden Himself under the veil of ignorance. So man says, 'I am the doer.' The reality is that He is the doer."

M. (to the young man)— Thakur used to tell a story to explain it. He would say, 'There was a landlord. He had many assistant administrators. Each one of them would hold his court. These administrators dealt with every case pertaining to the tenants. They would recline against a bolster, listen to every case and dispense punishment or reward.

"Now one day the landowner himself came to inspect his estate. He sat on that seat while the assistant administrator stood beside him with folded hands. The tenant said to the assistant administrator, 'Sir, so and so has done this to me.' The Assistant administrator would point at the landlord saying, "Not I, he. Today, the Master has come himself. Tell him all."

The Elder Jiten (talking hesitatingly) — The Master has himself come. Tell him, tell the Master.

M.— The assistant has clearly understood during all these days that he is not the master. It is the landowner who is the master. For all these days he was acting for him. He is only his representative.

"It is the same with free will. When one sees God, one realizes that there is no free will, that it is all God's will. Then one knows that one is only an instrument and that this instrument moves at His will. In that state, there is no feeling of grief, pain or poverty. One can clearly see that it is He who is doing all.

—M., The Apostle and the Evangelist – XI (Page 230)

ullet

# प्रधान कार्य है ईश्वर को जना देना

तुम जब समझते हो कि सर्वभूतों में वे हैं— उनके अतिरिक्त कुछ भी नहीं है— संसार, स्वदेश उनके बिना नहीं है। भगवान के साक्षात्कार के बाद देखोंगे वे ही परिपूर्ण हुए रह रहे हैं। ऋषि विशष्ठदेव ने रामचन्द्र से कहा था, 'राम, तुम जो संसार-त्याग करोंगे कहते हो, मेरे साथ विचार करो; यदि ईश्वर इस संसार के बिना हों तब ही तो त्याग करना'। रामचन्द्र ने आत्मा का साक्षात्कार किया हुआ था, इसीलिए चुप रहे।

ठाकुर श्रीरामकृष्ण कहते, "छुरी का व्यवहार (इस्तेमाल) जानकर छुरी हाथ में लो।" स्वामी विवेकानन्द ने दिखाया कि यथार्थ कर्मयोगी किसे कहते हैं। देश का क्या उपकार करोगे? स्वामीजी जानते थे कि देश के गरीबों को धन देकर सहायता करने की अपेक्षा और अनेक महत् कार्य हैं। ईश्वर को जना देना प्रधान कार्य है। उसके बाद है विद्यादान; उसके परे जीवनदान; उसके परे अन्न-वस्त्र दान।

—श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत, भाग पाँच, 2011, पृष्ठ 263-64

# **Patience and Forgiveness Necessary**

In an organization where many live together friction may arise, so patience and forgiveness are necessary.

> Source: For Seekers of God, Published by Advaita Ashrama, Mayavati, page 80.

It was afternoon. Mahapurushji had just finished his shave. Seeing a monastic worker of the orphanage at Baranagore, he called him to his side.

In the course of conversation the Swami remarked: 'How can you leave now? Let S. return; then perhaps you may go. And why do you want to go at all? Even here, after attending to your regular work, you will have plenty of time for spiritual practice. It is simply a matter of mental attitude. If the mind has a natural leaning towards God, one can make time and opportunity for spiritual practice. What is essential is earnestness. If you cannot carry on your spiritual practice here, you won't be able to do so anywhere.

The Master used to say, "He who has it here, has it there too." That is a statement full of truth, my child. Call upon God and pray to Him with great sincerity. He will give you an abundance of devotion and faith. Why should you go? You are doing the Lord's work. Is it a small matter?"

Monk: 'In season and out of season, K. says whatever comes to his mind.' Saying this, he started crying.

Mahapurushji: 'I had a feeling there was a misunderstanding between you two. Why does he use abusive language? I know very well that you do not deserve that treatment. You are a gentle, good-natured person. Why

don't you ask K. to come and see me some time? I will explain matters to him.

Do not take it to heart, my child. You know, when pots that are together are moved, friction is inevitable. Do not take it seriously. Misunderstandings are bound to occur sometimes and they are straightened out eventually. It takes two hands to clap.

Let him say whatever he wishes. Just endure it all quietly. That will prevent misunderstandings. You will have to be a little humble. You will have to sacrifice a little. You have dedicated your body, mind and soul to the Master's work. You have renounced everything for his sake. You will have to do this much also for his work. You should practise forbearance, you should sacrifice for his work. The Lord will bless you abundantly.'

Monk: 'Please bless me so that I can do it.'

Mahapurushji: 'Certainly you will be able to. You have my hearty blessings, my child. But you must pray to the Master sincerely, too. He will give you greater strength. You have come here renouncing everything for his sake. There is nothing that he will withhold from you. How will his work go on if you all do not live at peace in one place? Be patient for his sake, paying no attention to what people say, good or bad. You are all sadhus and have come here with the idea of improving yourselves. You do not have any other desire or wish in your life. You want him alone.

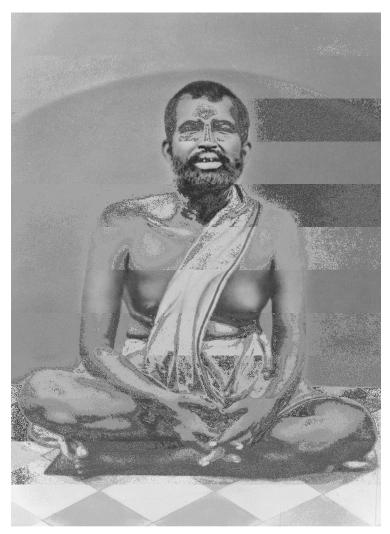
Temporary misunderstandings are inevitable when several work together. They aren't something to be blamed for; it is quite natural. Such misunderstandings come and go; they cannot touch your inner Self, because the main objective of your life is the realization of God. Such petty matters as attachment and aversion cannot deeply affect you. This is what we feel. The work that you are carrying

on is being done in a spirit of service. This work is purifying your mind day by day. You have no selfish motive in your work. You should carry on your spiritual practices along with your works of service. Whenever you can, practise japa, meditate upon God and pray to Him sincerely.

The moment you have a feeling of weakness or of lacking in anything, tell the Master about it. If you pray very sincerely, you are bound to get a response. Repeat his name often. The repetition of his name will purify your body and mind, washing away all impurities. You have renounced everything in order to be a sadhu. The realization of God is the aim of your life, my child. Your ideal is to remain unaffected by praise or blame, to be silent and contented with a little". Balance in praise or blame, silence and being satisfied with whatever comes - this is the state at which you should aim. You should be absorbed in God. What does it matter to you what people say about you?'

Place: Belur Monastery. Time: Friday, July 26, 1929.

Collection: Sh. Nitin Nanda



ब्रह्मज्योतिरनादि यच्च सततं मायास्वरूपाश्रितं लोके भात्यवतीर्य सर्वकृपया धृत्वा गुणान् निर्गुणम्। यत्पूर्वं विचचार लोकहितकृद् रामश्च कृष्णः पृथक् एकीभूय बभूव रामपुरतः कृष्णः भुवं ज्ञानदः॥

-डॉ० सुधीकान्त भारद्वाज

# श्री म ट्रस्ट : परिचय, उद्देश्य और गतिविधियाँ

- डॉ० (श्रीमती) निर्मल मित्तल

श्री रामकृष्ण श्री म प्रकाशन ट्रस्ट (श्री 'म' ट्रस्ट) के संस्थापक स्वामी नित्यात्मानन्द जी मास्टर महाशय (श्री म) के अन्तरंग सेवक हैं। उन्होंने 12 दिसम्बर, 1967 को इस धर्मार्थ ट्रस्ट की स्थापना की थी। ठाक्र-वाणी का प्रचार-प्रसार इस ट्रस्ट का प्रमुख उद्देश्य है । स्वामी नित्यात्मानन्द ने दीर्घकाल तक (1922 से 1932) श्री म का संग-लाभ लिया। श्री म के मुख से ठाकुर-वाणी सुनकर उन्होंने जान लिया था कि यह वाणी ही है मनुष्य-जीवन के लिए शाश्वत शान्ति तथा परमानन्द का सहज, सरल उपाय । श्री म अपने पास आने वाले भक्तों को ठाकुर-वाणी, ठाकुर के गृही व संन्यासी शिष्यों की कथाएँ, उनकी वाणी सुनाते तथा गीता, चण्डी, भागवत, बाईबल आदि ग्रन्थों के आलोक में उनकी वाणी की व्याख्या करते। स्वामी नित्यात्मानन्द श्री म निःसृत समस्त वाणी को अपनी डायरियों में संजोते रहे । बाद में इन्हीं डायरियों के आधार पर उन्होंने बंगला भाषा में 'श्री म दर्शन' ग्रन्थमाला की 16 भागों में रचना की। स्वामी नित्यात्मानन्द की अन्तरंग शिष्या व ट्रस्ट की द्वितीय प्रधान श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता ने इन 16 भागों का बंगला से हिन्दी में तथा इस हिन्दी-अनुवाद से उनके पति तथा स्वामी नित्यात्मानन्द के मन्त्र-दीक्षित शिष्य प्रो० धर्मपाल गुप्ता ने अंग्रेज़ी में अनुवाद किया । हिन्दी में ग्रन्थ का नाम 'श्री म दर्शन' ही रहा और अंगेज़ी में इस ग्रन्थमाला का नाम रखा गया — M. the Apostle and the Evangelist. श्रीमती ईश्वरदेवी गृप्ता ने श्री म रचित 'श्री श्री रामकृष्ण कथामृत' के पाँचों भागों का भी पाँच भागों में ही बंगला से हिन्दी में शब्द-शब्द अनुवाद किया। प्रो० धर्मपाल गृप्ता ने इनका अंग्रेजी-अनुवाद किया । इसके अतिरिक्त उन्होंने 'A short life of M. तथा 'Life of M. and Sri Sri Ramakrishna Kathamrita का लेखन भी किया। साथ ही पद्मश्री डी. के. सेनगुप्त के सहयोग से उन्होंने 'Sri Sri Ramakrishna Kathamrita Centenary Memorial' का सम्पादन भी किया।

ये सभी पुस्तकें श्री म ट्रस्ट के पास उपलब्ध हैं। इन पुस्तकों के और आगे इनके संशोधित संस्करणों के प्रकाशन के माध्यम से ठाकुर-वाणी के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ दुःखी व आपद्ग्रस्त जनों की शिवज्ञाने जीव-सेवा, साधु-सेवा भी श्री म ट्रस्ट का अहम् उद्देश्य है।

# नूपुर

ठाकुर-भक्तों को ठाकुरवाणी की झलिकयाँ निरन्तर मिलती रहें तथा वे ठाकुर, माँ सारदा, ठाकुर-वाणी के संवाहक श्री म, स्वामी विवेकानन्द, श्री म ट्रस्ट के संस्थापक स्वामी नित्यात्मानन्द जी महाराज आदि का परिचय पा सकें, इस उद्देश्य से ट्रस्ट की तत्कालीन प्रधान श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता की इच्छानुसार सन् 1994 में स्वामी नित्यात्मानन्द जी के 101वें जन्मदिवस पर 'नूपुर' नाम से एक स्मारिका निकाली गई। इसे अब वार्षिक पत्रिका के रूप में प्रतिवर्ष प्रकाशित किया जा रहा है। अनेक पाठकों ने ट्रस्ट के इस प्रयास को सराहा भी है। ट्रस्ट की वेबसाइट पर सभी नूपुरों को पढ़ा जा सकता है।

#### इंटरनैट प्रकाशन

श्री म ट्रस्ट के कुछेक अंग्रेज़ी प्रकाशनों, सभी नूपुरों के साथ-साथ दक्षिणेश्वर, मॉर्टन स्कूल, कांकुरगाछि एवं ठाकुर व श्री म से जुड़े तीर्थस्थलों के चित्र भी इंटरनैट वेबसाइट http://www.kathamrita.org पर उपलब्ध हैं।

#### श्री म उत्सव

श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता के मन में यह भी आया कि कुछ ऐसा किया जाए जिससे अधिकाधिक जन ठाकुर रामकृष्ण परमहंस की वाणी से लाभान्वित हों तथा वे ठाकुर के व्यास श्री म तथा उनकी रचना 'कथामृत' के संग परिचय पा सकें। इसके लिए उन्होंने यहाँ के श्री रामकृष्ण मिशन आश्रम के एक साधु के सुझाव पर श्री म ट्रस्ट की ओर से सन् 1997 में रामकृष्ण मिशन आश्रम, सैक्टर-15, चण्डीगढ़ के पास एक लाख रुपए की धनराशि रख दी थी ताकि इसके ब्याज से मिशन आश्रम प्रति वर्ष मास्टर महाशय-स्मृति समारोह आयोजित कर सके। तदनुसार 24-25 अक्तूबर, 1998 को यह प्रथम समारोह आयोजित भी किया गया। सभी उपस्थित जनों ने इस आयोजन की सराहना की। तब से यह उत्सव प्रति वर्ष मनाया जाता है। बड़ी संख्या में भक्त जन हर्ष-उल्लास के साथ इसमें भाग लेते हैं।

श्री म ट्रस्ट ने श्री रामकृष्ण मिशन आश्रम, चण्डीगढ़ के अतिरिक्त श्रीरामकृष्ण इन्स्टिच्यूट ऑफ कल्चर, कलकत्ता के पास एक लाख रुपये तथा देवघर विद्यापीठ (बिहार) के पास भी 25 हज़ार रुपये की धन-राशि रख दी है ताकि इस राशि के ब्याज से यहाँ भी श्री म उत्सव प्रतिवर्ष आयोजित किए जा सकें।

इन उत्सवों में उपस्थित स्वामीजीयों एवं भक्तों द्वारा ठाकुर-माँ, श्री म के जीवन व उपदेशों के अतिरिक्त कथामृत, श्री म दर्शन आदि विषयों पर प्रकाश डाला जाता है। स्वामीजीयों द्वारा भक्तों की जिज्ञासाओं का भी उत्तर दिया जाता है।

# दैनिक पूजा-अर्चा एवं सत्संग

प्लॉट संख्या 248, सैक्टर 19-डी, चण्डीगढ़ में स्थित, श्री म ट्रस्ट के मन्दिर व ध्यानघर— श्री श्रीरामकृष्ण कथामृत पीठ (श्री पीठ) में दैनिक पूजा-अर्चा के साथ-साथ 'कथामृत', 'श्री म दर्शन', माँ सारदा तथा स्वामी विवेकानन्द-साहित्य में से पाठ भी होता है। इसके अतिरिक्त समय-समय पर गीता, उपनिषद्, श्रीमद्भागवत, रामचरितमानस आदि से भी पाठ एवं उन पर चर्चा होती रहती है।

चण्डीगढ़-आश्रम के सचिव स्वामी जी की उपस्थिति में यहाँ मासिक सत्संग भी होता है। समय-समय पर बेलुड़ मठ से आए साधु जन भी यहाँ के सचिव स्वामीजी की प्रेरणा से इस मासिक सत्संग में उपस्थित रहते हैं।

#### वार्षिक उत्सव

दैनिक पूजा-अर्चा एवं सत्संग के अतिरिक्त यहाँ निम्न वार्षिक उत्सवों का आयोजन भी नियमित रूप से होता है —

- 1. कल्पतरु दिवस, 1 जनवरी
- 2. स्वामी विवेकानन्द जन्मोत्सव
- 3. श्रीरामकृष्ण परमहंस जन्मोत्सव
- 4. कथामृत दिवस, 26 फरवरी
- 5. श्री म ट्रस्ट स्थापना दिवस, 12 दिसम्बर
- 6. बुद्ध पूर्णिमा
- 7. स्वामी नित्यात्मानन्द जी का जन्मोत्सव, गंगा दशहरा
- 8. गुरु पूर्णिमा
- 9. श्री म का जन्मोत्सव, नाग पंचमी
- 10. माँ सारदा-जन्मोत्सव
- 11. श्री रामनवमी
- 12. श्री रामकृष्ण जन्माष्टमी आदि

इन उत्सवों में चण्डीगढ़-आश्रम के सचिव स्वामीजी यथासम्भव स्वयं उपस्थित रहते हैं। सभी भक्त उनके आगमन से, उनके प्रवचन से प्रोत्साहन व धन्यता लाभ करते हैं।

# साधु-सेवा

निर्जन-वास के साथ-साथ ठाकुर ने गृहस्थों के लिए ईश्वर-प्राप्ति का, आनन्द प्राप्ति का एक और उपाय बताया है — साधु-सेवा, साधु संग।

श्री म ट्रस्ट द्वारा समय-समय पर साधु-सेवा की जाती है। श्री म ट्रस्ट के परिसर में कोई-कोई साधु चन्द दिनों के लिए आकर विश्राम भी पाते हैं।

# लाइब्रेरी/पुस्तकालय

ट्रस्ट के भवन, सेक्टर 19 में लाईब्रेरी/पुस्तकालय भी है। यहाँ ट्रस्ट के प्रकाशनों के अतिरिक्त श्रीरामकृष्ण साहित्य, रामायण, महाभारत, गीता, श्रीमद्भागवत्, देवीभागवत् आदि ग्रन्थ भी हैं । पुस्तकें विक्रय भी की जाती हैं और issue की व्यवस्था भी है ।

# दान/अनुदान

श्री म ट्रस्ट द्वारा प्रतिवर्ष अनेक ज़रूरतमन्द व्याक्तियों/ संस्थाओं/साधुओं को दान दिया जाता है ।

# रामकृष्ण-विवेकानन्द-भावप्रचार-परिषद्

वर्तमान में श्री म ट्रस्ट की गतिविधियाँ आगे और आगे बढ़ी हैं। सन् 2006 से यह ट्रस्ट इस परिषद् से भी जुड़ गया है।

'आत्मनो मोक्षार्थं जगत हिताय च' के उद्देश्य को लेकर सन् 1984 में बेलुड़ मठ द्वारा इस परिषद की स्थापना की गई थी । 'आत्मनो मोक्षार्थं' का अभिप्राय है 'अपने मोक्ष के लिए' अर्थात आत्म-विकास, व्यक्तिगत जीवन-गठन. निजी चरित्र-गठन के लिए किए जाने वाले कार्य वा साधन। ध्यान. जप, पूजा, पाठ, स्वाध्याय आदि कार्य' 'आत्मनो मोक्षार्थं' के अन्तर्गत आते हैं । आत्म-साक्षात्कार या मोक्ष-प्राप्ति जीवन का परम लक्ष्य है । पर इसके साथ-साथ 'जगत् हिताय च' अर्थात् जगत्-हित की, लोक कल्याण की भावना, चेष्टा भी रहे और जो 'सर्वभृतहिते रता:' अर्थातु सभी प्राणियों के हित में संलग्न हैं, उनका लक्ष्य भी आध्यात्मिक हो, शिवज्ञाने जीव-सेवा हो। प्रत्येक के भीतर नारायण का, भगवान का वास है, इस भाव से निष्काम सेवा हो । दरिद्र नारायण-सेवा, रोगी नारायण-सेवा, अस्पताल-स्कूल आदि खोलना, श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द-भावधारा का सन्देश जन-जन तक, बाल-वृद्ध सभी तक पहुँचे, इसके लिए स्कूल-कॉलेज में quiz contests करवाना. भाषण व पत्र-पठन प्रतियोगिताएँ करवाना आदि कार्य 'जगत् हिताय' के अन्तर्गत आते हैं। अभिप्राय यह कि आध्यात्मिकता और सेवा या सेवा और आध्यात्मिकता—दोनों साथ-साथ चलें। ये दोनों कार्य एक-दूसरे के परिपूरक हैं । इन दोनों में सामंजस्य बिठाते हुए व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन को समुन्नत बनाएँ—यही श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द-भावधारा का लक्ष्य है।

समाज में कहीं भी कोई ठाकुर-माँ-स्वामीजी की बात करता हो, उनकी पूजा-अर्चा करता हो, उनके नाम पर समाज-सेवा कर रहा हो—ऐसे लोगों को श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा के साथ जोड़ देना, उन्हें उचित मार्गदर्शन देना इस परिषद् का उद्देश्य है। बेलुड़ मठ के साधुओं का यह मानना है कि मूलतः यह गृहस्थों का आन्दोलन है, ठाकुर के गृही भक्तों का आन्दोलन है। स्वयं ठाकुर के साथ मथुरानाथ, शम्भुनाथ, सुरेन्द्र मित्र, बलराम बोस, गिरीश घोष आदि जन ठाकुर के मार्ग-दर्शन में आदर्श गृही थे। आदर्श गृहस्थियों का निर्माण संन्यासी से ही सम्भव है, सर्वत्यागी संन्यासी से। जो गृही जन ठाकुर-माँ-स्वामीजी के नाम पर उनके अनुगत होकर कुछ भी कार्य कर रहे हैं, उनका वह कार्य सही दिशा में व सुचारू रूप से चलता रहे, इस उद्देश्य से इस दिशा में कार्यरत व्यक्तियों वा संस्थाओं को रामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा के साथ जोड़कर उन्हें सही मार्ग-दर्शन देते रहना इस परिषद् का लक्ष्य है।

कार्य करेंगे गृहीजन और मार्ग-दर्शन होगा बेलुड़ मठ के साधुओं का। मार्ग-दर्शन के रूप में बेलुड़ मठ ने दस सूत्री मार्गदर्शिका बनाई है। इस मार्गदर्शिका का पालन करने पर ही व्यक्ति वा संस्थाएँ इस परिषद् से जुड़ सकेंगी।

रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन (बेलुड़ मठ) के सहसचिव श्रीमत् स्वामी शिवोमयानन्द जी अखिल भारतीय रामकृष्ण-विवेकानन्द-भाव प्रचार परिषद् के संयोजक हैं। इन्हीं के निर्देशन में उत्तर भारत में भाव प्रचार परिषद् का पहला वार्षिक सम्मेलन रामकृष्ण मठ, लखनऊ में सम्पन्न हुआ था। 11-12 मार्च, 2006 को पुनः यह सम्मेलन यहाँ इन्हीं पूज्य स्वामी शिवोमयानन्द जी के निर्देशन में हुआ। और श्री म ट्रस्ट ने प्रथम बार इस छठे सम्मेलन में भाग लिया। छोटी-बड़ी कुल 23 संस्थाओं के प्रतिनिधि इस छठे सम्मेलन में उपस्थित थे। इनमें से कुछेक को, उनकी पात्रता देखते हुए, भाव प्रचार परिषद् का सदस्य घोषित किया गया। इसी सूची में विगत 52 (1967 में आरम्भ) वर्षों से कार्यरत श्री म ट्रस्ट का नाम भी सम्मिलित किया गया।

परिषद् की इस मीटिंग में निर्णय लिया गया कि कार्य और अधिक सुचारु रूप से तथा और अधिक तीव्र गति से आगे बढ़ाने के लिए इस उत्तर भारत भाव प्रचार-परिषद् के तीन खण्ड हों—

#### 1. उत्तर प्रदेश

- 2. उत्तरांचल प्रदेश
- 3. पंजाब, हरियाणा, हिमाचाल प्रदेश, जम्मू व कश्मीर तथा चण्डीगढ़

सो श्री म ट्रस्ट तीसरे खण्ड के अन्तर्गत आया।

निर्णय लिया गया कि इस खण्ड के advisor चण्डीगढ़ आश्रम के सचिव स्वामी जी होंगे । इस तीसरे खण्ड का नाम रखा गया—उत्तर पश्चिमांचल रामकृष्ण विवेकानन्द भाव प्रचार परिषद् । इस परिषद् के अब तक तेरह सम्मेलन हो चुके हैं — तेरह अर्धवार्षिक और तेरह वार्षिक ।

इन सभी सम्मेलनों में श्री म ट्रस्ट ने भाग लिया और ट्रस्ट-गतिविधियों की रिपोर्ट पढ़ी गई। सभी सम्मेलनों में श्री म ट्रस्ट के कार्यों की सराहना की गई और भविष्य के लिए मार्गदर्शन भी मिला।

इस बार का सम्मेलन 13-14 अप्रैल, 2019 को हुआ। 13 अप्रैल को पिटयाला में डॉ० आर. एल. मित्तल और श्रीमती डॉ० राधा मित्तल के घर में और 14 अप्रैल को रामकृष्ण मिशन आश्रम, चण्डीगढ़ में। ट्रस्ट की ओर से ट्रस्ट की सदस्या डॉ० (श्रीमती) निर्मल मित्तल संयोजक के रूप में सम्मिलित हुईं।

'आत्मनोमोक्षार्थं जगत् हिताय च' के कार्य की ओर ट्रस्ट और अधिक उत्साह से आगे बढ़ रहा है। ठाकुर-कुपा!

# श्री 'म' ट्रस्ट के प्रकाशन

## 1. श्री 'म' दर्शन

## बंगला संस्करण— भाग 1 से 16 — स्वामी नित्यात्मानन्द

श्री 'म' दर्शन महाकाव्य में ठाकुर, माँ सारदा, स्वामी विवेकानन्द तथा अन्यान्य संन्यासी एवं गृही भक्तों के विषय में नूतन वार्त्ताएँ हैं। और इसमें है कथामृतकार श्री 'म' द्वारा 'कथामृत' के भाष्य के साथ-साथ उपनिषद्, गीता, चण्डी, पुराण, तन्त्र, बाइबल, कुरान आदि की अभिनव सरल व्याख्या।

# 2. श्री 'म' दर्शन

#### हिन्दी संस्करण— भाग 1 से 16

श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता द्वारा बंगला से यथावत् हिन्दी-अनुवाद।

#### 3. श्री 'म' दर्शन

अंग्रेजी संस्करण— ('M.'— The Apostle and the Evangelist)

श्री 'म' दर्शन ग्रन्थमाला का अंग्रेजी-अनुवाद प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता ने 'M.'— The Apostle and the Evangelist नाम से किया है। ट्रस्ट के पास (1-13, 15-16) भाग उपलब्ध हैं।

#### 4. Sri Sri Ramakrishna Kathamrita Centenary Memorial

प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता और पद्मश्री श्री डी०के० सेनगुप्ता द्वारा अंग्रेजी में सम्पादित बृहद् ग्रन्थ, जिसमें ठाकुर श्रीरामकृष्ण, 'कथामृत', श्री 'म' और 'श्री म दर्शन' पर श्रीरामकृष्ण मिशन के संन्यासियों समेत अनेक गणमान्य विद्वानों के शोधपूर्ण लेख हैं।

#### 5. A Short Life of Sri 'M.'

स्वामी नित्यात्मानन्द जी महाराज के मन्त्र-शिष्य और श्री 'म' ट्रस्ट के भूतपूर्व सचिव, प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता द्वारा अंग्रेज़ी में लिखी गई श्री 'म' की संक्षिप्त जीवनी।

#### 6. Life of M. and Sri Sri Ramakrishna Kathamrita

प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता द्वारा लिखित श्री 'म' के जीवन तथा 'कथामृत' पर शोध प्रबन्ध।

# 7. श्री श्री रामकृष्ण कथामृत (हिन्दी संस्करण— भाग 1 से 5)

श्री महेन्द्रनाथ गुप्त (श्री म) ने ठाकुर रामकृष्ण परमहंस के श्रीमुख-कथित चिरतामृत को अवलम्बन करके ठाकुरबाड़ी (कथामृत भवन), कोलकता-700 006 से 'श्री श्री रामकृष्ण कथामृत' का (बंगला में) पाँच भागों में प्रणयन एवं प्रकाशन किया था। इनका बंगला से यथावत् हिन्दी अनुवाद करने में श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता ने भाषा-भाव-शैली— सभी को ऐसे सरल और सहज रूप में संजोया है कि अनुवाद होते हुए भी यह ग्रन्थमाला मूल बंगला का रसास्वादन कराती है।

## 8. Sri Sri Ramakrishna Kathamrita (English Edition)

श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता के हिन्दी-अनुवाद से प्रोफेसर धर्मपाल गुप्ता द्वारा कथामृत का अंग्रेजी-अनुवाद। सभी पाँचों भाग प्रकाशित।

# 9. नूपुर (वार्षिक स्मारिका)

श्री म ट्रस्ट के संस्थापक और हम सब के पूजनीय गुरु महाराज स्वामी नित्यात्मानन्द जी के 101वें जन्मदिन पर उनकी स्मृति में 'नूपुर' नाम से सन् 1994 ईसवी में इस स्मारिका का प्रकाशन आरम्भ हुआ था। उसी स्मारिका ने अब वार्षिक पत्रिका का रूप ले लिया है, जिसमें अन्य बातों के अतिरिक्त ठाकुर रामकृष्ण परमहंस, माँ सारदा, श्री म, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी नित्यात्मानन्द, 'श्री म दर्शन' आदि के बारे में प्रचुर सामग्री रहती है। साथ ही 'कथामृतकार श्री 'म' के द्वारा 'श्री 'म' दर्शन' में कही उन बातों को भी प्रकाश में लाया जाता है, जो 'श्री श्री रामकृष्ण कथामृत' में नहीं हैं। नूपुर-2018 के प्रथम भाग में श्री 'म' ट्रस्ट का इतिहास वर्णित है अंग्रेज़ी भाषा में।

# 10. लाइयाँ ते तोड़ निभाइयाँ (स्मारिका)

श्रीमती ईश्वरदेवी गुप्ता के 100वें जन्मदिवस पर सन् 2015 में यह स्मारिका प्रकाश में आई।